CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प.1

गीत गोविन्द

विनयमोहन शर्मा

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

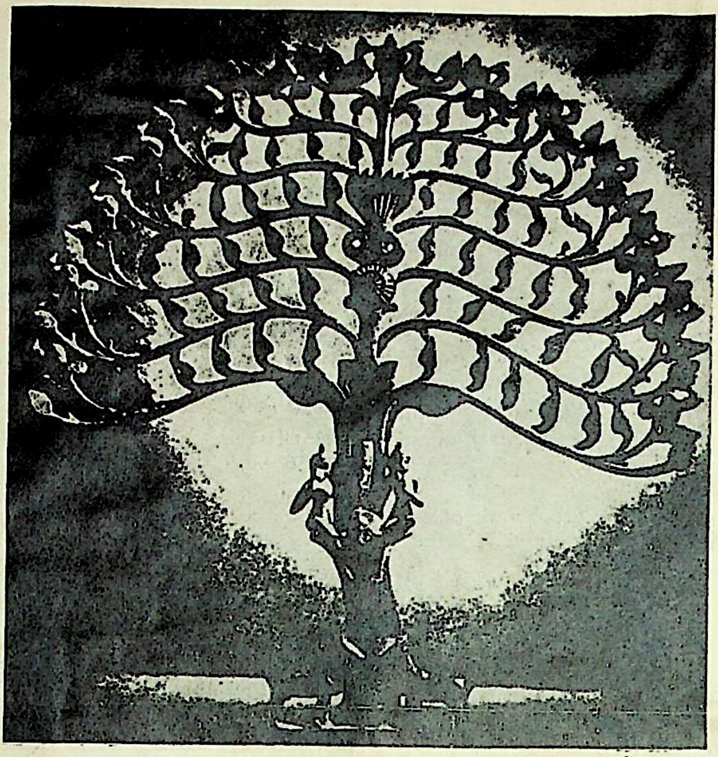

॥भद्रा ह्येषां निहिताधिवाचि॥

सच्चिदानन्द वात्स्यायन कपिला वात्स्यायन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीतगोविन्द

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हमारा अभिनव साहित्य

सचित्र गृह-विनोद	अरुण	८)
शिवालक की घाटियों में	विद्यानिधि	५)
रजवाड़ा	देवेश दास	५)
यूरोपा	देवेश दास	३)
भारत का सांस्कृतिक इतिहास	हरिदत्त वेदालंकार	६)
प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास	रांगेय राघव	१२)
मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ	सावित्री सिन्हा	८)
साहित्य, शिक्षा और संस्कृति	डॉ० राजेन्द्र प्रसाद	५)
भारतीय-शिक्षा	डॉ० राजेन्द्र प्रसाद	३)
चम्पारन में महात्मा गांधी	डॉ० राजेन्द्र प्रसाद	५)
आपका मुन्ना (भाग १)	सावित्री देवी वर्मा	३।।)
आपका मुन्ना (भाग २)	सावित्री देवी वर्मा	५)
आपका मुन्ना (भाग ३)	सावित्री देवी वर्मा	५)
आदर्श पत्र-लेखन	यज्ञदत्त शर्मा	७।।)
आदर्श भाषण-कला	यज्ञदत्त शर्मा	७।।)

हमारा काव्य-साहित्य

रूपदर्शन (सचित्र)	हरिकृष्ण 'प्रेमी'	६)
आँखों में	हरिकृष्ण 'प्रेमी'	२।)
बन्दना के बोल	हरिकृष्ण 'प्रेमी'	२।।)
बलिपथ के गीत	जगन्नाथप्रसाद मिलिंद	३)
नव-प्रभात	चन्द्रिकाप्रसाद मिश्र	।।।)
रावण महाकाव्य	हरदयालुसिंह वर्मा	५)
अमृत प्रभा	राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह	।।=)
अम्बपाली	राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह	३।।)
राधाकृष्ण	राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह	२।)
अन्तर्ध्वनि	राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह	।।।)
प्राणोत्सर्ग	देवीदयाल चतुर्वेदी मस्त	१।)
राजधानी के कवि	गोपालकृष्ण कौल-रामावतार त्यागी	३)
काव्य-धारा (संग्रह)	डॉ० इन्द्रनाथ मदान	३।।)
मधु-संचय (संग्रह)	बालकृष्ण राव	२।।)
प्रथम सुमन	सत्यवती शर्मा	१)

आत्माराम एण्ड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीतगोविन्द

(सचित्र हिन्दी रूपान्तर)

रूपान्तरकार

विनयमोहन शर्मा

प्रस्तावना-लेखक

डाक्टर सिद्धेश्वर वर्मा

१९५५

आत्माराम एण्ड संस

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

काश्मीरी गेट

दिल्ली-६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य
पाँच रुपये

मुद्रक
अमरजीतसिंह नलुवा
सागर प्रेस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विषय-सूची

भाग			पृष्ठ
प्रस्तावना : डाक्टर सिद्धेश्वर वर्मा	..	..	*i – xv*
भूमिका	..	..	*xvii – xxii*
१. हिन्दी गीतगोविन्द			
पहला सर्ग	..	..	१
दूसरा सर्ग	..	..	१३
तीसरा सर्ग	..	..	२१
चौथा सर्ग	..	..	२७
पाँचवाँ सर्ग	..	..	३३
छठा सर्ग	..	..	३७
सातवाँ सर्ग	..	..	४१
आठवाँ सर्ग	..	..	५१
नवाँ सर्ग	..	..	५७
दसवाँ सर्ग	..	..	६१
ग्यारहवाँ सर्ग	..	..	६७
बारहवाँ सर्ग	..	..	७५
२. संस्कृत गीतगोविन्द			
प्रथमः सर्गः	..	..	८३
द्वितीयः सर्गः	..	..	९१
तृतीयः सर्गः	..	..	९५
चतुर्थः सर्गः	..	..	९९
पंचमः सर्गः	..	..	१०३
षष्ठः सर्गः	..	..	१०७
सप्तमः सर्गः	..	..	१११
अष्टमः सर्गः	..	..	११७
नवमः सर्गः	..	..	१२१
दशमः सर्गः	..	..	१२५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एकादशः सर्गः १३१
द्वादशः सर्गः १३७
परिशिष्ट
हिन्दी गीतगोविन्द के कतिपय गीतों की स्वर-लिपियाँ १४३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तक 'गीतगोविन्द' (हिन्दी रूपान्तर) संस्कृत की प्रसिद्ध काव्य-कृति 'गीतगोविन्द' का अनुवाद मात्र नहीं, उसका रूपान्तर है। जिस प्रकार कोई कंगन को गढ़कर आरसी में परिवर्तित कर दे और उस आरसी को किसी रमणी के हाथ की अँगुलि के परिमाण के अनुसार रच ले, उसी प्रकार यह पुस्तक मूल संस्कृत गीतगोविन्द की भाषा-भाव-सामग्री को ग्रहण कर हिन्दी-भाषा की प्रकृति और हिन्दी-काव्य की आधुनिक प्रवृत्ति के अनुरूप रची गई है। यह प्रकृति और प्रवृत्ति मूल संस्कृत की प्रकृति और प्रवृत्ति से अभिन्न होती हुई भी कुछ अंशों में भिन्न है, दार्शनिक शब्दों में हिन्दी-संस्कृत का भेदाभेद 'तादात्म्य सम्बन्ध' है। यदि रूपान्तर का अभिप्राय अक्षरार्थ-अनुवाद समझकर यह पुस्तक लिखी जाती तो जो सेवा इस पुस्तक द्वारा भारतीय संस्कृति की उद्दिष्ट थी उसका शतांश भी सम्भव न हो पाता। इस हिन्दी रूपान्तरकार का मुख्य उद्देश्य यह है कि प्राचीन भारत की सर्वोत्तम गीतात्मक प्रवृत्ति किसी तात्विक रूप में पुनः उमग उठे, काव्यनिष्ठ गीत—सम्पत्ति जो, पहिले से ही इस देश में अव्यवहृत रूप से विद्यमान है, किसी रूप में फिर से लोक-जीवन का अंग बन सके और प्राचीन तथा अर्वाचीन संस्कृतियों का एक सुन्दर संगम चरितार्थ हो सके। इस उद्देश्य की पूर्ति तभी सम्भव हो सकती थी जब वर्तमान हिन्दी की प्रकृति तथा प्रवृत्ति की छाप इस कृति पर अंकित होती। हिन्दी रूपान्तरकार ने मूल कृति का शब्दशः अनुवाद न कर अपने उद्देश्य को भली भाँति साधित किया है।

इस पुस्तक का हिन्दी-साहित्य में महत्त्व

इस पुस्तक के प्रकाशन से हिन्दी साहित्य को एक अभिनव जीवन मिल रहा है। आधुनिक हिन्दी में गीतगोविन्द का आस्वाद लेने के लिए हिन्दी-प्रेमी बहुत समय से आतुर हो रहे थे। हमें प्रसन्नता है कि इस रूपान्तर से उनको तोष होगा। हिन्दी गीति-काव्य की इससे निश्चय हा श्रीवृद्धि हुई है। कोमल भावनाओं का प्रकाशन वास्तव में सुगेय भाषा द्वारा किस तरह किया जा सकता है, इसका निदर्शन इस गीति-कृति से हो जाता है। जहाँ 'पन्त और निराला दोनों में सूक्ष्म शब्द-चेतना थी, उनकी कविता ने भाषा को एक नया सौन्दर्य और गहराई दी'।—(श्री अज्ञेय वात्स्यायन; कल्पना, फरवरी १९५१; पृष्ठ २८) वहाँ इस पुस्तक द्वारा वह सौन्दर्य और वह गहराई कुछ और भी आगे बढ़कर सुगेय मधुरता का अभिनव रूप धारण करती हुई हिन्दी को मिठास को व्यापक बना रही है। कारण 'लय और झंकार की सुरीली तान जब तक हृदय को स्पर्श नहीं करती तब तक गीतात्मक पदों का प्रभाव व्यापक रूप नहीं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राप्त कर सकता।' (श्री परमानन्द शर्मा—'साहित्य और अनुभूति'; पृष्ठ ११६; सन् १९५१) इस व्यापक रस का आस्वादन पाठक स्वयं कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त इस पुस्तक के गीतों ने किस प्रकार अपने भावों की सूक्ष्मता तथा प्रचुरता और अपनी प्रतिबिम्बनाओं की बहुपक्षता से हिन्दी-काव्य को उच्चस्तर पदवी पर पहुँचा दिया है, यह आगे प्रतिपादित किया जायगा।

संस्कृत गीतगोविन्द

प्रसिद्ध संस्कृत गीतगोविन्द के विषय में केवल संक्षिप्त निर्देश पर्याप्त होगा। इसके कर्त्ता कवि जयदेव ११वीं शताब्दी में बंगाल के राजा लक्ष्मणसेन के राजकवि थे। इस कविता में भाषा और भाव का अद्भुत सामंजस्य पाया जाता है जिसके कारण देश-विदेश के अनेक समालोचकों ने इसका मूल्यांकन बलपूर्वक किया है। इस कविता का बहिरंग ऐसा हृदयंगम है कि संस्कृत से अनभिज्ञ लोग भी इसकी पंक्तियों को सुनकर आनन्द से सिर हिलाने लगते हैं। इस निष्कर्ष से यह कृति वास्तव में वह है जिसे आजकल गीतिकाव्य कहा जा रहा है। इस दृष्टिकोण से गीतगोविन्द का निर्माण किसी पारिभाषिक संगीत-प्रचार के निमित्त नहीं किया गया था। यह संकुचित भाव इसके कर्त्ता के उद्देश्य में कदापि न था, उसका उद्देश्य तो इसका व्यापक प्रचार करना था; जिसमें वह सर्वथा सफल हुआ है। आज भी बंगाल में जहाँ-तहाँ इसके गीत गाये जाते हैं। जयदेव की प्रतिभा यह जानती थी कि किस प्रकार पदबन्ध पद्धति से साधारणजन भी संगीत रस का आस्वादन कर सकते हैं। परन्तु कहीं-कहीं हिन्दी-साहित्य में इस कृति के सम्बन्ध में भ्रान्ति देखी जा रही है, जिसका निवारण आवश्यक है। जैसे मार्च १९५० के 'साहित्य' (पटना) पृष्ठ ५ के एक लेख में यह कहा गया है कि "संस्कृत-काल में भारतीय संगीत का जो शास्त्रीय रूप निर्मित हुआ था और जो''रूढ़ि-ग्रस्त होकर'' दूर जा पड़ा था''उसकी मुक्ति की आकांक्षा में ही 'गीतगोविन्द' की सांगीतिकता फूट पड़ी थी"। इस बलपूर्वक वचन को पढ़कर इस प्रस्तावना-लेखक ने कुछ प्रसिद्ध संगीत-शास्त्रज्ञों से पत्र-व्यवहार प्रारम्भ किया, जिनके उत्तरों से स्पष्ट परिलक्षित होता है कि न तो संस्कृत संगीत-शास्त्र में इस प्रकार की रूढ़िग्रस्तता उत्पन्न हुई थी और न इस कल्पित घटना का 'गीतगोविन्द' के साथ कुछ सम्बन्ध ही था। उदाहरणतः काशी विश्वविद्यालय के संगीत-विभाग के अनुसन्धान-प्राध्यापक दानीएलू ने अपने १३-१-५१ के पत्र में लिखा—"गीतगोविन्द ने भारतीय संगीत शास्त्र में एक नये युग का संचालन कर दिया, इसका कोई प्रमाण विद्यमान नहीं उस युग का शास्त्रीय संगीत रूढ़िग्रस्त हो गया, इसका भी कोई प्रमाण विद्यमान नहीं।" ("By no existing evidence can the *Geet Govind* be stated to have created a new era in Indian Music...There is no existing evidence that the

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

classical music of the time may have been stereotyped.")

इसी प्रकार 'हिन्दुस्तानी संगीत' १९५१ के लेखक प्राध्यापक ग० ग० रानाड़े अपने ३-१-५१ के पत्र में लिखते हैं—"गीतगोविन्द ने संगीत-शास्त्र की वृद्धि पर कोई विशेष छाप नहीं डाली। संगीत-दृष्टि से गीतगोविन्द का स्थान गौण ही है। शार्ङ्गदेव ने अपने ग्रंथ 'संगीत-रत्नाकर' में इसका नाम तक लेने की परवाह नहीं की।" ("*Geet Govind* has not made any special marks of its own in the advancement of music. Musically *Geet Govind* has a minor place which 'Sarnga Deva' did not even care to mention in his *Sangit Ratnakar*.")

इसके अतिरिक्त संगीत-शास्त्र की दृष्टि से संगीत का काव्य-रूप में प्रकट करना उच्च संगीत की गिरावट ही समझी जा सकती है। इस सम्बन्ध में प्रो० दानीएलू ने उसी पत्र में लिखा है—"यह गीत-गोविन्द सम्भवत: उन पुराने प्रबन्धों में से है जिनमें कविता को संगीत में विशेष स्थान दिया गया था, परन्तु संगीत की दृष्टि से इसे निस्सन्देह मानदंड की अधोगति समझनी चाहिए।" ("It may have been one of the early composition in which the poem is given a prominent part in relation to the music itself. This of course musically has to be considered as a lowering of standard.")

यह प्राय: विदित ही है कि पक्के राग के विशेषज्ञ प्रचलित भाषा से स्वतन्त्र ही रहना चाहते हैं। उनकी प्रवृत्ति तो यह है कि वे एक-दो शब्दों को लेकर उन्हीं को भिन्न-भिन्न रूप से तोड़-मोड़कर गाते हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि 'गीत-गोविन्द' का संगीत शास्त्रीय संगीत से स्वतन्त्र होता हुआ एक सर्वसाधारण ग्राह्य स्वरूप रखता था, जिसका आधार लोकगीत समझना चाहिए।

गीतिकाव्य क्या है?

कुछ वर्षों में हिन्दी साहित्य में गीतगोविन्द जैसे ग्रन्थों के लिए गीतिकाव्य का प्रयोग किया जा रहा है, जिसका अर्थ अभी तक निश्चित नहीं हो पाया। प्रचलित हिन्दी-कोषों (जैसे हिन्दी शब्द-सागर, श्रीवास्तव, भार्गव आदि कोषों) में इस शब्द का निवेश नहीं है और न प्राचीन संस्कृत भाषा या साहित्य में 'गीतिकाव्य' नामक कोई शब्द विद्यमान है। प्राचीन भारत की संस्कृति में तो 'गीतिकाव्य' की कल्पना ही असम्भव थी, क्योंकि काव्य का गीति से वियोग-विचार गोचर भी न था। वैदिक युग में 'इस जाति ने वेदों में जो कुछ भी कहा, भावमय संगीत में कहा है'। (निराला: 'गीतिका', १९३४, भूमिका, पृष्ठ १) इसी विचार को बड़े सुन्दर शब्दों में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वैदिक ऋषि स्वयं प्रकट करते हैं—"देवताओं का आश्रय न तो शृंग था, न यजुस। देवताओं का आश्रय केवल साम अर्थात्, संगीत था।" (देवा वै र्नचि न यजुष्य आश्रयन्ते तेसामन्नएवाश्रियन्त ! (तैत्तिरीय संहिता; सातवलेकर; संस्करण सं० २००१) ।

इससे प्रतीत होता है कि वैदिक साहित्य संगीत प्रधान था और वैदिक संस्कृति का आश्रय संगीत था। इसी वैदिक ग्रन्थ के एक और स्थान पर ऋषि प्रार्थना करते हैं—"मुझ में संगीत हो, कविता हो, यश हो, विद्या हो।" (स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रावश्च मे श्रुतिश्च मे। ···तै० सं० ४७१.१—)

इसी भाव को प्राध्यापक गौड़ इस प्रकार स्पष्ट करते हैं—"गीति-काव्य साहित्य-जगत् का अर्द्धनारीश्वर है।" (साहित्य; मार्च १९५०; पृष्ठ १) इससे प्रतीत होता है कि परमार्थिक दृष्टि से तो भारतीय संस्कृति में गीति और काव्य में कोई भेद न था। हाँ, व्यावहारिक दृष्टि से भले ही कल्पित किया जा सकता हो। परन्तु गीति और काव्य की यह भारतीय अभेद-बुद्धि और भी आगे चलती थी, इन दो पदार्थों से अभिन्न भाषा भी समझी जाती थी। जैसे नाटच-शास्त्र में भरत का वचन है, "कोई भी शब्द छन्दहीन नहीं और न कोई ऐसा छन्द ही है जो शब्दहीन हो।" ('छन्दहीनो न शब्दोस्ति न छन्दश्शब्दवर्जितः'—नाट्य-शास्त्र; सं० १९८५; काशी चौखंभा ग्रन्थमाला; पृष्ठ १०२, अध्याय १५, श्लोक ४०) इसी ग्रन्थ में संगीत के तीन रूप बताये गये है अर्थात् स्वर, ताल और भाषा (गान्धर्वं त्रिविधं विद्यात्, स्वर, ताल, पदात्मकम् नाट्य-शास्त्र; पृष्ठ ३१७, अध्याय २८, श्लोक १२)। इसी सम्बन्ध में संगीत रत्नाकर में एक गीत का नाम गद्य कहा गया है, यह वह गीत था जो यद्यपि छन्दहीन था तथापि गाया जाता था, यह केवल छन्दहीन पदों का समूह था (गद्य निगद्यते छन्दोहीनं पद कदम्बकम्) संगीत रत्नाकर; आनन्दाश्रम, पूना १८९६; खण्ड १, पृष्ठ ३०६) इससे यह प्रतीत होता है कि छन्द-प्रक्रिया से स्वतन्त्र वाक्य भी संगीत की दृष्टि से एक परमार्थिक 'छन्द' रखते हुए गाये जा सकते थे। इससे सुश्री दिनेशनन्दिनीकृत हिन्दी गद्यगीत की तुलना की जा सकती है। श्री विनयमोहन शर्मा 'दृष्टिकोण' में लिखते है—"जिसका स्वरूप यद्यपि गद्य का होता है पर उसकी आत्मा में गीतात्मकता होती है।" (पृष्ठ ८७) परन्तु भारत के तत्त्वज्ञ तो भाषा मात्र में गीति को थोड़ा-बहुत अवश्य अनुभव करते थे और वर्तमान युग में पन्त का इसी भाव से वचन उल्लेखनीय है कि भाषा का और मुख्यतः कविता की भाषा का प्राण राग है। (साहित्य सुषुमागत—लेख छन्द-साधना; पृष्ठ ६९; सं० १९९?)

अब यहाँ प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि क्या भाषा की गीतात्मकता की कल्पना केवल कवियों की अतिशयोक्ति है अथवा इसके मूल में वैज्ञानिक तत्त्व भी हैं ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसके उत्तर में इतना तो अवश्य दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि साधारण भाषा के गीतात्मक अंश की सत्ता में निषेधात्मक प्रमाण सर्वानुभव सिद्ध है। उदाहरणतः दिल्ली अथवा लखनऊ के हिन्दी-भाषियों को दूसरे प्रान्तों की हिन्दी का लहजा कुछ खटकता है। इसके अतिरिक्त साक्षात् प्रमाण यह है कि प्रत्येक वाक्य के अंश बोलते समय कुछ ऐसे विभागों में बँट जाते हैं जिनका लय और नाद उस भाषा विशेष में स्थिर-सा रहता है, जैसे हिन्दी के वाक्य—'मैं कल चार बजे पहुँच जाऊँगा'—में तीन भाग स्वभावतः तीन भिन्न नादों तथा लयों में किसी हिन्दी भाषा-भाषी जनता में समान ही बोले जाते हैं। इसी घटना का नाम पन्त ने उच्चारण संगीत निर्दिष्ट किया है। "अक्षर मात्रिक छन्द···हिन्दी के उच्चारण संगीत की रक्षा नहीं कर सकते।" (साहित्य सुषमा; पृष्ठ ८१) किसी जनता विशेष के लिए काव्य का वही रूप अनुकूल होगा जो उसके उच्चारण-संगीत के अनुकूल है। कोई दूसरी बोली इस उच्चारण-संगीत का स्थान नहीं ले सकती। इसलिए एक लेखक का यह वचन—"खड़ी बोली में सचमुच ही शब्द-माधुर्य की कमी है" (साहित्य सुषमा; पृष्ठ ६८) भाषा-समीक्षकों के अनुभव-विरुद्ध है। खड़ीबोली का अपना माधुर्य, अपना 'उच्चारण-संगीत' निस्सन्देह विद्यमान है, जिसका बलशाली प्रमाण श्री विनयमोहन शर्मा की प्रस्तुत कृति से सिद्ध हो जायगा।

इस प्रकार प्रत्येक भाषा में एक गीतात्मक अंश की सत्ता को स्वीकार करते हुए हम अब गीत के रूढ़ अर्थ पर विचार करेंगे। हिन्दी शब्द-सागर में गीत का यह लक्षण दिया गया है—"वह वाक्य, पद या छन्द जो गाया जाता हो; गाने की चीज विशेष; विश्वसंगीत-शास्त्र के अनुसार जो वाक्य धातु या मात्रायुत हो वही गीत कहलाता है।" इस लक्षण में एक आपत्ति है कि इसमें गीत की मनोरंजकता जिसे आवश्यक और मौलिक लक्षण दिखाया जाना चाहिए था, बताई तक नहीं गई। अंग्रेजी के वेब्स्टर कोष (१९३४) में गीत का यह अर्थ बतलाया गया है—"गीत एक लिरीकल अथवा रोमांची कविता का नाम है; वह कृति विशेष जिसके शब्द पूर्व-निर्दिष्ट संगीत के अनुरूप गढ़े जाते हैं अथवा जो संगीत के अनुरूप बन सके।" (Song : a lyrical poem or ballad whose words are set to music.)

परन्तु इस लक्षण से भी गीत का अर्थ उपलब्ध नहीं होता, क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक रोमांची कविता गीत कहलाई जा सके। यदि एक कवि या ग्रन्थ-सम्पादक किसी रोमांची कविता का शीर्षक 'गीत' लिख बैठे, तो क्या इस निर्देश मात्र से वह 'गीत' हो सकता है? हमारे विचार से सबसे उपपन्न लक्षण गीत का चतुर कलिनाथ ने किया है, और वह यह है—"स्वरों का वह गठन जो मनोरंजक हो गीत है।" (टीका संगीत-रत्नाकर; खण्ड १; पृष्ठ ६) परन्तु इस लक्षण में भी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मनोरंजकता की व्यापकता विशेषतः उल्लेखनीय है। यदि कोई कविता केवल उसके कर्त्ता अथवा कुछ थोड़े से व्यक्तियों को ही प्रसन्न कर सके तो उसे हम गीत नहीं कह सकते। गीत की बड़ी परख तो यह है कि उसे सुनकर वह पुरुष भी झूमने लग जाय जो उसके अर्थ को सर्वथा न समझता हो। यह लक्षण संस्कृत गीतगोविन्द तथा इस हिन्दी-रूपान्तर के गीतों पर बड़ी सुन्दरता से घट सकता है। इस प्रकार के गीत के लिए 'संगीत' के छन्द शास्त्र की अनुर्वातिता जैसी कि 'निराला' ने की है (गीतिका, भूमिका, पृष्ठ १०) अनावश्यक है। क्योंकि ऐसा बन्धन गीत की व्यापकता का प्रतिबन्धक होगा। गीत वही सर्वसाधारण-प्रिय हो सकता है, जो 'किसी अचेतन कला की स्वाभाविक उपज हो', अंग्रेजी विश्व कोष, १४वाँ संस्करण। (Song a natural product of an unconscious art.)

गीत के रूढ़ अर्थ पर विचार करके अब हम गीति-काव्य के तत्व को दर्शाने का प्रयत्न करेंगे। यह तो स्पष्ट ही है कि प्रत्येक गीत गीति-काव्य नहीं हो सकता। गीति-काव्य कहलाने के लिए गीत तभी योग्य हो सकते हैं जब उनमें काव्यरस तथा काव्य-प्रतिबिम्बना का पूरा-पूरा संचार हो। इस दृष्टि से गीति-काव्य उन गीतों का नाम है जिनमें काव्य-रस तथा काव्य-प्रतिबिम्बना असंदिग्ध हों और जिन्हें सर्व-साधारण वास्तव में गा सकें अथवा जिनके गाने का प्रचार वास्तव में सर्वसाधारण में हो गया हो। ऐसे गीति-काव्य के उदाहरण में 'बंगाल के माँझियों की पतवारों की छप्-छप् की ताल पर तरंगायित होने वाले रवीन्द्रनाथ के गीत हैं।' (साहित्य; मार्च १९५०; पृष्ठ ११) अथवा तुलसीकृत रामायण की वे चौपाइयाँ हैं जो गाँव-गाँव में गाई जा रही हैं। परन्तु इन दिनों हिन्दी-साहित्य-विचारकों में एक प्रवृत्ति यह देखी जा रही है जो गीति-काव्य को अंग्रेजी लिरीकल कविता का पर्याय समझ बैठी है, जिससे अत्यन्त अनभीष्ट परिणाम का भय है। उदाहरणतः लखनऊ से प्रकाशित 'किंजल्क' (सं० २००७) के एक लेख 'हिन्दी में गीति-काव्य का विकास' (पृष्ठ ६६) में कहा गया है—गेयत्व और सघन आत्मानुभूति जिस कविता में एक साथ पाई जाती है, उसी को गीति-काव्य मानना चाहिए।" कवि की आत्मानुभूति को मौलिक आधार मानने के कारण तुलसीकृत रामायण, और सूरकृत पद गीति-काव्य से बहिष्कृत कर दिये गये हैं। यह निम्न उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है—"भक्त कवियों के गीतों में जहाँ भी कृष्ण या राम की जीवन-लीला का वर्णन है वहाँ न सूर···और न तुलसी में ही शुद्ध गीति-भावना पाई जाती है।" अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि गीति-काव्य में कवि की आत्मानुभूति को आधार मानने का प्रमाण क्या है? लेख में कोई प्रमाण नहीं दिया गया और न किसी दूसरे लेखक ने ही इस मान्यता का प्रमाण दिया है। (देखिये 'साहित्य'; मार्च १९५०; पृष्ठ ३-४ और 'दृष्टिकोण:' वि० मो० शर्मा; पृ० ५)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृष्ण या राम के जीवन-वर्णन में गीति-भावना नहीं पाई जाती, यह किसने सिद्ध किया है ? यह किसी कवि या कवियों का अनुभव है ? यदि है, तो इस अनुभव का विवरण कहाँ पाया जाता है ? यदि जिस कविता में कवि की अहंबुद्धि न भी हो, उसमें भी गीति-भावना मान ली जाय तो इसमें क्या आपत्ति है ? जब वास्तव में यह देखा गया है कि तुलसीकृत रामायण आदि जैसी कृति में कवि की अहंबुद्धि दिखाई न देने पर भी वह घर-घर में गाई जा रही है, तो उसमें गीति-भावना के अभाव की कल्पना का हेतु क्या है ? क्या भारत के किसी प्राचीन अथवा मध्यकालीन साहित्यिक ने भी इस अभाव को अनुभव किया अथवा दरशाया है ? यदि नहीं तो क्या इसलिए कि अंग्रेजी साहित्यिकों ने लिरीकल अथवा गीति-काव्य को कवियों की आत्मानुभूति-मूलक बताया है ? परन्तु तमाशे की बात है कि जिन अंग्रेजी की उक्तियों को महामन्त्र मानकर हम अपनी युक्तिधारा द्वारा अनेक उपसंहारों का प्रपंच खड़ा कर देते हैं, उन्हीं अंग्रेजों की चरम प्रभाव्य पुस्तक 'विश्व कोष' (१४वाँ संस्करण) ने लीरीकल काव्य के इस उपकरण का सर्वथा त्याग कर दिया है। वहाँ स्पष्ट लिखा है—"जफ्राए सम्भवतः पहला रस-पण्डित था जिसने सर्वथा स्पष्ट देख लिया कि लिरीकल काव्य स्वयं कविता मात्र का दूसरा नाम है जिससे यह सिद्ध होता है कि लिरीकल कविता में कविता के सारे प्राण का, सबका व्यक्तिगत तथा भावगत अंश का, अन्तर्भाव है। इसलिए आडम्बरी समालोचना कृत काव्य-विभाजन कवितातत्त्व-विमर्श के लिए वास्तव में किसी काम का नहीं है। हम कथानक अथवा प्रबन्ध-काव्य का सत्ता को मानते हैं, हम मानते हैं कि नाटक भी कविता है, परन्तु जब इन दोनों में व्यक्तिगत भाव प्रबल होता है तब वह लिरीकल तक जा पहुँचता है। परन्तु शुद्ध प्रबन्ध तथा शुद्ध नाटक के अतिरिक्त प्रायः सब कविता लिरीकल होती हैं।

(Jouffroy was perhaps the first aesthetician to see quite clearly that lyrical poetry is, really, nothing more than another name for poetry itself, that it includes all the personal and enthusiastic part of what lives and breathes in the art of verse, so that the divisions of pedantic criticism are of no real avail to us in its consideration. We recognise a narrative a classical poetry; we recognise drama, in both of these when the individual inspprirations is strong. There is much that trembles on the verge of the lyrical. But outside what is pure epic and pure drama, all or almost all is Lyrical.)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(Encyclopædia Britannica 14th Edition, Article Lyrical Poetry.)

इससे स्पष्ट है कि गीतिकाव्य केवल वही कविता नहीं है जो कवि की अहंबुद्धि-द्योतक अथवा आत्मानुभूति-अभिव्यंजक हो। कविता-भाव में सब के भाव का अन्तर्भाव है, चाहे वह कवि का अपना हो अथवा रामकृष्ण आदि काव्यगत व्यक्तियों का।

गीति-भावना के इस संकुचित दृष्टिकोण के अतिरिक्त इस लेख में एक और अनोखा विचार पाया गया है कि "गीति के भक्ति सम्बन्धी रूपों को छोड़कर अन्य लौकिक भावनाओं के अन्तर्गत हिन्दी के पूर्वकालीन काव्य में शुद्ध गीति-भावना का प्रवेश नहीं हुआ।" (किंजल्क; पृष्ठ ८४) परन्तु आश्चर्य है कि इस उक्ति के समर्थन में कोई भी प्रमाण नहीं दिया गया। यदि यह सत्य है तो भारतीय संस्कृति अत्यन्त संकुचित परिधि रखती है, ऐसा कहना होगा। हम यहाँ इस सम्बन्ध में केवल एक लेख का उल्लेख करते हैं, वह है—'डिंगल गीतों की सारिणी' (प्राध्यापक नरोत्तमदास स्वामी द्वारा लिखित)। उसमें डिंगल गीतों के विषय में कहा गया है—"ये गीत एक विशेष लय से पढ़े जाते थे··· गीतों से वीर लोग हँसते-हँसते प्राण न्योछावर कर देते थे।" (राजस्थानी; मार्च १९४८; पृष्ठ २३)

उक्त लेख में आत्मानुभूति को गीति-काव्य का मौलिक तत्त्व दिखाकर अतिशयोक्ति की गई है। कहा गया है "कि गीति-भावना का जो स्वानुभूतिक तत्त्व उसमें विद्यमान रहता है वही उसे कविता का रूप देता है।" परन्तु इसका भी कोई प्रमाण नहीं दिया गया। यदि संसार के मुख्य कवियों का अनुभव इस सम्बन्ध में प्रदर्शित किया जाता तो इस विचार-सरणी का कुछ हेतु भी ज्ञात हो जाता। उसी लेख के पृष्ठ ३९ पर कहा गया है कि "कविता की मुख्य प्रेरणा आत्मानुभूति है।" परन्तु यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि यह आत्मानुभूति कहाँ से आती है? क्या इस आत्मानुभूति का दृष्य जगत् से कोई सम्बन्ध नहीं है? इस सम्बन्ध में उपर्युक्त 'साहित्य-सुषमा' में आया हुआ श्री जोशी का 'कला का उद्गम' (पृष्ठ २६) लेख उल्लेखनीय है। उसमें कहा गया है कि केवल सत्ता ही नहीं, सत्ता के पीछे जो अव्यक्त चेतना वर्तमान है वह भी अनेक रूपों में प्रतिपल अपने को प्रकाशित कर रही है। इसी चेतना के प्रभाव से विश्व का प्रत्येक कण घूर्णित होता रहता है। ···मनुष्य इसी चेतना द्वारा प्रेरित होकर सृष्टि के संगीत को अपनी भाषा में व्यक्त करना चाहता है। "इससे प्रतीत होता है कि व्यक्तिगत आत्मानुभूति समष्टिगत संगीत अभिव्यंजना का निमित्त मात्र है। उर्दू महाकवि ग़ालिब इससे भी आगे जाता है। उसके विचार में सौन्दर्य व्याकुल होकर स्वयं अपने आपको देखना चाहता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दर्पण का सौन्दर्य पलकें बनना चाहता है, इसीलिए कि मैं अपने आपको देख सकूं।

"जलवा (सौन्दर्य) अज़बस (निस्संदेह) कि तकाजाए (प्रयत्न) निगह करता है,

जौहरे (सौन्दर्य) आईना भी चाहे है मिज़गाँ (पलकें) होना।"

(अहसान कृत समूज़े; ग़ालिब; पृष्ठ ३२)

उक्त उद्धरणों से स्पष्ट हो जायगा कि कविता की प्रेरणा में केवल आत्मानुभूति ही मुख्य हेतु नहीं है, व्यक्ति से बाहर जो जगत है उसका भी अन्तर्भाव इस हेतुता में मानना पड़ेगा। विषय-विषयी दोनों की प्रेरणा से ही काव्य-कृति सम्भव हो सकती है। इस सम्बन्ध में प्राध्यापक गौड़ के सुन्दर वचन उद्धरणीय हैं, "गीति-काव्य एक सार्वभौम अभिव्यक्ति है··· उसका अन्तरंग तो सार्वकालिक और सर्वजन संवेद्य होता है।" (साहित्य; मार्च १९५०; पृष्ठ ३) बात तो यह है कि जब तक जनसाधारण में भी गीतात्मकता न हो, उसकी कवि की अनुभूति के साथ एकतानता कदापि नहीं हो सकती, इस दृष्टि से जनसाधारण और कवि में केवल मात्रा का भेद है। दूसरे यह भी विचार-योग्य है कि जनसाधारण की समूची प्रवृत्तियाँ भी कभी-कभी कविता की प्रेरणा में मुख्य हेतु बन जाती हैं। उदाहरणतः द्विवेदी-युग में राष्ट्र-प्रेम की कविताओं की प्रेरणा का मुख्य हेतु जनसाधारण की प्रवृत्तियाँ थीं। (किंजलक; आधुनिक हिन्दी साहित्य की नवीन प्रवृत्तियाँ; पृष्ठ १२९) इस सम्बन्ध में यह भी सम्भव है कि जयदेवकृत गीतगोविन्द और श्री विनयमोहन शर्मा कृत यह हिन्दी-रूपान्तर इन दोनों गीति-काव्यों की प्रेरणा एक मुख्य कारण जनसाधारण की प्रवृत्ति भी हो। जहाँ अन्य कवियों पर यह प्रवृत्ति चरितार्थ न हो सकी और उसे प्रायः निराश ही होना पड़ा, वहाँ सौभाग्य से इन कृतियों में वह सफल हो गई है।

गीति-काव्य की अध्ययन-पद्धति

हिन्दी गीति-काव्य का जो अब विशेष रूप प्रकट हो रहा है उसके वास्तविक अध्ययन के लिए इस भूमिका-लेखक को एक पद्धति सूझी है। जिसकी सम्पूर्ण योजना फिर कभी प्रकाशित किये जाने की सम्भावना है। इस समय केवल इसका निर्देश मात्र पर्याप्त होगा। इस पद्धति के अनुसार हिन्दी गीति-काव्य—अध्ययन के तीन पक्ष होने चाहिएँ—(१) ध्वनि, (२) प्रतिबिम्बना और (३) रस।

यह पुस्तक एक आदर्श गीति-काव्य है

किसी गीति-काव्य का सर्वोत्तम आकर्षक पक्ष, जो स्वभावतः जनसाधारण को भी आकर्षित कर सके, निस्संदेह ध्वनि है। क्योंकि यह गीति-काव्य का बाह्य स्वरूप है, ऐसे काव्य का यह ध्वनि-पक्ष किसी विशाल अट्टालिका के अग्रभाग के तुल्य है

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिसका हृदय-ग्राह्य होना उस अट्टालिका के लिए सर्वप्रथम गुण माना जाता है। गीति-काव्य विषयक ध्वनि के दो पक्ष हैं, पहिला सामूहिक ध्वनियाँ और दूसरा व्यक्ति रूप वर्ण। सामूहिक ध्वनि जब गीतात्मक हो तो उसे लय कहते हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी लय होती है, उस लय के सर्वतोग्राह्य होने के लिए यह आवश्यक है कि उसमें किसी भाषा विशेष के उच्चारण-संगीत के विरुद्ध किसी प्रकार का खटका न हो, उदाहरणतः इस पुस्तक में स्निग्ध माधव नामक सर्ग की निम्न पंक्ति को लीजिए।

"यमुना तीरे वेतस-कुंजे बैठे हैं यदुवंशी।"

इसको पढ़ते ही एक निरन्तर माधुर्य का आनन्द प्राप्त होता है। परन्तु अब इसी पंक्ति की अनुरूप जयदेवकृत पंक्ति को लीजिए—

"यमुना नीर वानीर निकुंजे मन्दमास्थितम्"

यहाँ अन्तिम ध्वनि समूह 'मन्दमास्थितम्' में हिन्दी भाषी को कुछ खटका लगता है। यहाँ स्वर-भंग हो जाने के कारण मानना पड़ेगा कि जयदेवकृत यह पंक्ति इस अंश में हिन्दी के उच्चारण-संगीत के विरुद्ध है, इसी प्रकार अधोलिखित लयों की तुलना कीजिए—

शीर्षक	पृष्ठ	हिन्दी रूप अनुरूप	संस्कृत रूप	उल्लेखनीय लक्षण
तव विरहे वनमाली	३५	राधा से जा कहना	अनुनयमृदुवचनेन चानयेथाः	संस्कृत 'मृदुवचनेन' में खटका है।
"	"	चलदल-सा चल जाता जी जब	स्फुटति कुसुम निकरे विरहि हृदय दलनाय	संस्कृत के प्रायः सभी लयों में कुछ न कुछ खटका है।
रमते आज मुरारी	४७	यमुन-पुलिन के सघन-कुंज में रमते आज मुरारी	विजयी मुरारि-रघुना	संस्कृत लय का प्रथम अंश खटकता है।

उपरिनिर्दिष्ट उद्धरणों से सुस्पष्ट हो जायगा कि हिन्दी के उक्त रूपान्तर में निरन्तर लय-माधुर्य है।

अब हम ध्वनिगत व्यक्तिरूप-वर्णों को लेते हैं। उनकी रागात्मकता के लिए दो लक्षण आवश्यक हैं—(१) वर्ण कोमल हों, और (२) वर्णों का स्वरूप निकटवर्ती वर्णों के कुछ न कुछ सदृश हो। ये दोनों गुण प्रस्तुत कृति में प्रचुरता से पाए जाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शीर्षक	बन्ध
सरस बसन्त समय-वर्णन	हृदय में उठती रह रह पीर, नाचते हैं हरि सरस अधीर।

उक्त बन्ध में प्रायः सभी वर्ण कोमल हैं, पीड़ा के स्थान में 'पीर' मार्दव के निमित्त निविष्ट किया गया है। और ठकार तथा हकार के अनुप्रास ने सम्पूर्ण छन्द हृदयंगम बना दिया है।

शीर्षक	बन्ध
'राधा बोल उठी मन की ...	लीला से ईर्ष्याहत होकर भूली सुधबुध तन की।'

(दूसरा सर्ग) पृष्ठ १५

उक्त बन्ध में दन्त्य व्यंजनों का आधिक्य कोमलता का संवर्धक है। इस कोमलता को उष्मध्वनियाँ अर्थात् बकार और हकार और भी बढ़ाती हैं। 'सुधबुध' अनुप्रास को भी झलकाता है।

शीर्षक	बन्ध
स्निग्ध माधव (चौथा सर्ग) ...	'आर सखी की व्यथा कथा सब धीरे-धीरे बोली।'

इस बन्ध में कोमल व्यंजनों के अतिरिक्त समस्वर-आश्रित अनुप्रासों की भरमार है अर्थात् सखी की 'व्यथा कथा धीरे-धीरे'; जिससे पग-पग राग स्रवित होता है।

गीतिकाव्य का दूसरा मुख्य अंग प्रतिबिम्बना है जिसका अभिप्राय केवल तुलना या उपमा नहीं है, प्रतिबिम्बना कवि की वह मिश्र सृष्टि है जो अनेक उपायों जैसे भाषा की विभिन्न भंगियों, सम्बन्धी रूपों तथा सूक्ष्म भावों के मिश्रण से जीती-जागती मूर्तियों को पाठक के सम्मुख लाती है। प्रस्तुत पुस्तक का विशेष सौन्दर्य यह है कि यह स्थान-स्थान पर संस्कृत मूल से बहुत-कुछ आगे बढ़कर हमारे आगे अभिनव मूर्तियाँ उपस्थित करती हैं जिनकी गुणवन्ता और उपपन्नता अनुभव कर के पाठक इस गीत विशेष को और भी अधिक गाने के लिए प्रेरित होता है। इसमें संदेह नहीं कि ये प्रतिबिम्बनाएँ मिश्र हैं। इसलिए इनका विश्लेषण न केवल असम्भव-सा वरन् सौन्दर्य-भंजक होगा। परन्तु तो भी विषय को समझने के लिए हम प्रधानता के आधार पर इस पुस्तक की प्रतिबिम्बनाओं को इस प्रकार विभक्त करेंगे।

(क) वे प्रतिबिम्बनाएँ जिनका प्रधान आधार हिन्दी भाषा की प्रकृति है।

(अ) सी सी कर के कभी सिहरती, (स्निग्ध माधव; पृष्ठ ३२)

संस्कृत मूल 'सीत्करोति' है जो टीकाकारों को भी स्पष्ट नहीं हुआ। एक टीकाकार तो इसकी 'रंग फीका पड़ गया है,' ऐसी व्याख्या करता है; और दूसरा 'सीत्कार करती हैं' ऐसा भाष्य करता है। परन्तु मूल में 'सीत्करोति' के पहले 'रोमांचित' आता है जिससे 'हिन्दी रूपान्तर' में 'सी सी कर के कभी सिहरती' किया गया है "प्रस्वेद से शीत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का अनुभव" इस मूर्ति को झट से सामने ले आता है। हिन्दी-भाषियों के लिए यह तात्कालिक मिश्र मूर्ति उपस्थापन हिन्दी भाषा का ही चमत्कार है। भावाश्रित चित्र उपस्थापन करने में हिन्दी के उक्त प्रकार के शब्द कैसे योग्य हो सकते हैं," इसका समर्थन इसी सम्प्रदाय के सदृश निम्न उक्तियों से हो जाता है...

"सजनि ! हमारा स्वप्न सदन क्यों सिहर उठा सहसा थर थर।"

—पन्त : पल्लविनी; सं० २००४; पृष्ठ ३४

"रो रो कर सिसक सिसक कर कहता मैं करुण कहानी।"

—प्रसाद : 'आँसू'; पृष्ठ १५

हिन्दी वर्णों का यह चित्रण भाव और प्रतिबिम्बना दोनों को एक ही क्षण में हमारे सम्मुख ले आता है।

(आ) 'हँसती कलियाँ धीरे'

—तव विरहे वनमाली ; हिन्दी गीतगोविन्द; पृष्ठ ३५

संस्कृत मूल में शब्द केवल 'स्फुटित कुमुद निकरे' (कमलों के खिलने पर) है परन्तु हिन्दी के 'हँसती कलियाँ' ने यहाँ एक सजीव और रमणीय प्रतिबिम्बना उत्पन्न कर दी है। हिन्दी का यह पुष्प-चित्रण प्रसिद्ध ही है, देखिए—

"वन की सूनी डाली पर सीखा कलि ने मुस्काना।"

—पन्त : पल्लविनी; पृष्ठ १७७

"मुरली मुखरित होती थी, मुकुलों के अधर विहँसते।"

—प्रसाद : आँसू; पृष्ठ २६

जहाँ संस्कृत मूलप्रतीक केवल वस्तु वृत्तान्त मात्र है, वहाँ हिन्दी रूपान्तर एक ललित चित्रण है, जिसका आधार हिन्दी काव्य-भाषा का प्रयोग-प्रताप है।

(इ) अति रो उठती है राधा।

—चिन्तिता राधा

मूल संस्कृत "सा परितापं चकार उच्चैः" (वह ऊँचे स्वर से दुःख प्रकट करने लगी) एक विवरणमात्र है। हाँ, भाषा से पाण्डित्य अवश्य झलकता है, परन्तु "अति रो उठती है राधा," यह हिन्दी रूपान्तर व्यंजना सहित रोने के प्रारम्भ से अवसान तक अनेक चित्र हमारे सामने तत्काल ले आता है। यही प्रचुर प्रतिबिम्बना प्रसाद की निम्न पंक्ति में दृष्टव्य है—

"रजनी की रोई आँखें आलोक-बिन्दु टपकातीं।"

—आँसू; पृष्ठ ५१

'रोई आँखें', क्या ही सुन्दर वाक्-सम्प्रदाय है। आँखें रो रो कर रह गई हैं और अब उन से निरन्तर अश्रुधारा निकल रही है। क्या ही अच्छा हो यदि हिन्दी-कवियों के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऐसे सारगर्भित खंडवाक्यों का एक कोष बन जावे जिनसे हम इच्छानुसार प्रतिबिम्बना-पुष्पों का अवचय कर सकें।

(ख) वे प्रतिबिम्बनायें जिनमें नाटकवत साक्षात्कार होता है—

वर्तमान हिन्दी कविता के इस पक्ष का पर्याप्त अनुसन्धान नहीं किया गया, परन्तु यह वह पक्ष है जिसमें हिन्दी कविता सौभाग्य से बड़ी प्रौढ़ता को प्राप्त हो चुकी है। इसकी विशेषता यह है कि हिन्दी कविता की प्रतिबिम्बनाओं में एक अद्भुत सजीवता, बहुपक्षता, तात्कालिकता, भावानुरूपता और प्रत्यक्षता (Directness) आ रही है जिससे हिन्दी कविता को सन्तुलनात्मक काव्यों में एक प्रमुख स्थान मिलने की सम्भावना है। उदाहरणतः देखिए—

(अ) *'इसी समय सम्मुख हो कोई छाया-सी आ डोली।*
और सखी की व्यथा-कथा सब धीरे-धीरे बोली।'

—स्निग्ध माधव; हिन्दी गीतगोविन्द; पृष्ठ २९

संस्कृत मूल में केवल दो शब्द 'राधिका सखी' दिये गये हैं। परन्तु इस हिन्दी रूपान्तर में अनेक पक्षता है जैसे कृष्ण के सम्मुख सखा का आगमन, उसकी आकस्मिकता और गूढ़रूपता तथा पूर्णतया राधा-दुःख-प्रकटन बड़े मधुर शब्दों द्वारा दर्शाये गये हैं। यदि वास्तव में कविता जीवन को दिखाती है तो इसका उदाहरण उपर्युक्त छन्द है। इसी के सदृश भाव 'प्रसाद' में भी देखिए—

"मादकता से आये तुम, संज्ञा से चले गये थे।"

—प्रसाद : आँसू; पृष्ठ ३३

(आ) *"विवश बनातीं मदन-लहरियाँ, मिलकर मलय समीरे।"*

—'तव विरहे वनमाली', हिन्दी गीतगोविन्द

मूल संस्कृत की पंक्ति यह है, "बहति मलय समीरे मदनमुपनिधाय," जहाँ 'मदनमुपनिधाय' का अर्थ काम को सामने रखकर किया गया है। अब यद्यपि 'काम को सामने रखकर' इस प्रतिबिम्बना में भी मूर्तिमत्ता विद्यमान है, परन्तु यह एक ही रूढ़िबद्ध मूर्ति है जिससे प्रतिबिम्बना की न तो बहुपक्षता और लचक और न भावानुरूपता की स्फूर्ति हो सकती है। इसके विपरीत, हिन्दी रूपान्तर में मदन की लहरियों का उठना, उनका मिलना, और राधा को विवश बनाना वास्तविक जीवन की बहुपक्षता के सुन्दर द्योतक हैं। ऐसी ही कल्पना अन्य कवियों में भी देखिए—

"चिर आकांक्षा से हो थर-थर उद्वेलित रे अह रह सागर।"

—पन्त : पल्लविनी; पृष्ठ १८३

'मानस-सागर के तट पर क्यों लोल-लहर की घातें।"

—प्रसाद : आँसू; पृष्ठ ८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(इ) "अति चम चम तारक दल से (रमते आज मुरारी...)"

—हिन्दी गीतगोविन्द; पृष्ठ ४७

यह मोतियों की माला का वर्णन है। इसमें मधुर ध्वनियों द्वारा माला के चमकीले मोती साक्षात् प्रतिबिम्बित होते हैं। परन्तु मूल संस्कृत में केवल 'मणिसरम् अमलम् शुभ्रमाला' ही दिया गया है जिससे विशेष चित्रण नहीं हो पाती। हिन्दी कविता में चमकीले पदार्थों का प्रभावशाली वर्णन प्रसिद्ध है। देखिए—

जगमग जगमग नभ का आँगन लद गया कुंद कलियों से घन।

—पन्त : पल्लविनी; पृष्ठ; १८३

हिन्दी कविता की मिश्र और सजाव प्रतिबिम्वनाएँ चित्रकार के लिए एक विस्तृत क्षेत्र हैं, और प्रतिबिम्वना जिज्ञासु को विचारार्थ एक अनन्त सामग्री प्रदान करती हैं। इस पुस्तक में पाठक को अनेक उल्लेखनीय प्रतिबिम्बनाएँ मिलेंगी।

गीति-काव्य का तीसरा अंग रस की सघनता है जैसा कि ऊपर सविस्तार दर्शाया गया है। यह रस विषयक कृति कवि की आत्मानुभूति को प्रकट करे, यह आवश्यक नहीं है, भाव चाहे कवि ने अपनाकर आविष्कृत किये हों अथवा और किसी व्यक्ति के मुख द्वारा जतलाये हों, यह एक गौण बात है। इस पुस्तक का एक विशेष चमत्कार यह है कि इसमें भावों की गह्वरता ने प्रतिबिम्बना और भाषा की सहायता से रस को कई गुना बढ़ा दिया है। देखिए—

(अ) मैं भोली ठग गई सखी के आश्वासन-वचनों से।

—चिन्तिता राधा; हिन्दी गीतगोविन्द; पृष्ठ ४३

अब मूल से तुलना कीजिए। संस्कृत मूल में केवल यही प्रतीक है, 'सखिजन वचन वंचिता" (सखी के वचन से ठग गई) अब भेद तो केवल 'मैं भोली' दो पदों का है। परन्तु यह है हिन्दी भाषा की चमत्कृति। इन दो पदों से जहाँ राधा साक्षात् हमारे सम्मुख होती है, वहाँ भावों की प्रबलता इन्हीं से आविष्कृत होती है। देखिए—

(आ) किन्तु नहीं राधा का इससे नाचा रे मन मोर।
हुई क्षुब्ध सागर में जैसे लहरों का हो शोर॥

—खंडिता राधा; हिन्दी गीतगोविन्द; पृष्ठ ५३

संस्कृत मूल में केवल 'सा सूयम्' (क्रोध से) यही पद आया है परन्तु यहाँ क्रोध के आवेग को दो प्रभावशालिनी प्रतिबिम्बनाओं द्वारा दर्शाया गया है। पहली ता विषम प्रतिबिम्बना 'नाचने' की और दूसरी तद्विपरीत 'सागर' की।

(इ) इधर मधुर यह रात मुझे रह रह रुला रही है।

—चिन्तिता राधा; हिन्दी गीतगोविन्द; पृष्ठ ४३

संस्कृत मूल यह है 'भामह विधुरयति मधुरमधुयामिनी' (आह! मुझे यह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मधुर रात विहीन कर रही है) टीकाकार ने अर्थ 'विकलयति' किया है। परन्तु अब तुलना कीजिए कि क्या 'विधुरयति' (विहीन करती है), से वह भाव-प्रवाह प्रकट हो सकता है "जो रह रह रुला रही है" से ? निस्संदेह हिन्दी भाषा की प्रवृत्ति यहाँ सहायक हुई है।

(ई) मदन मुदित सुख मधुर रसातुर (रमते आज मुरारी)

—हिन्दी गीतगोविन्द; पृष्ठ ४७

यहाँ संस्कृत मूल में केवल यह पद है, 'समुदित मदने' (जिसमें काम प्रकट हुआ) परन्तु हिन्दी रूपान्तर में 'मदन-सुख' और 'रसातुर' के विषय-भाव को दर्शाकर तथा भावों के सूक्ष्म मिश्रण की व्यंजना करके रस को सूक्ष्म और सघन बना दिया गया है। यदि इन अति सुन्दर भावों में कवि ने साक्षात् आत्मानुभूति प्रकट नहीं की तो क्या इससे यह कृति गीति-काव्य न होगी ? नहीं नहीं, उपर्युक्त विवेचन एवं प्रतिपादन से पाठक-वृंद को अब सुस्पष्ट हो गया होगा कि विश्वगेय ध्वनि की झंकार उत्तम प्रतिबिम्बनाओं की भरमार और सघन रस के प्रसार से यह हिन्दी गीतगोविन्द निस्संदेह एक आदर्श गीति-काव्य है।

शिक्षा मन्त्रालय
नई दिल्ली

(डाक्टर) सिद्धेश्वर वर्मा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूमिका

संस्कृत साहित्य में तीन जयदेव नामधारियों का उल्लेख मिलता है। एक हैं 'गीतगोविन्द'कार, दूसरे 'प्रसन्नराघव' नाटककार और तीसरे 'चंद्रालोक'कार। 'गीतगोविन्द'कार के सम्बन्ध में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है। चन्द्रदत्तकृत 'भक्तमाला' और महीपतिकृत भक्ति-विजय नामक ग्रंथों में जयदेव सम्बन्धी आख्यान मिलते हैं। पर उन्हें ऐतिहासिक मान्यता प्राप्त नहीं है।

सनातन गोस्वामी के अनुसार वंगाधिपति महाराज लक्ष्मणसेन की सभा में कवि जयदेव विद्यमान थे। कहा जाता है, लक्ष्मणसेन के प्रासाद-द्वार पर एक पत्थर खुदा हुआ था जिस पर निम्न श्लोक अंकित था—

"गोवर्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः।
कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च॥"

लक्ष्मणसेन का समय बारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध माना जाता है। बाबू हरिश्चन्द्र ने इन्हें सन् १०२५ से लेकर १०५० के भीतर ही स्थित किया है। बंगला के जयदेव-चरित्र में इनका आविर्भाव-काल तेरहवीं या चौदहवीं शताब्दी माना गया है। परन्तु बहुमत से उनका समय ईसा की बारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध ही सिद्ध होता है। उत्कल देश में जगन्नाथपुरी के सन्निकट किन्दुबिल्व ग्राम में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम भोजदेव और माता का राधादेवी या रामादेवी था। कई हस्तलिखित प्रतियों में वामादेवी भी मिलता है। गीतगोविन्द के बारहवें स में कवि ने इस सम्बन्ध में निम्न पंक्तियाँ लिखी हैं—

"श्री भोजदेव प्रभवस्य राधादेवीसुत श्री जयदेवकस्य।
पराशरादि प्रियवर्ग कण्ठे श्रीगीतगोविन्द कवित्वमस्तु॥"

राजा लक्ष्मणसेन के राजकवि के नाते इनकी ख्याति रही। इनके जीवन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि ये छोटी ही अवस्था में मातृ-पितृ-विहीन हो गये थे। इनके विवाह का प्रसंग भी चमत्कारिक है। एक ब्राह्मण ने संतति-लाभ के लिए जगन्नाथ के मंदिर में पूजा प्रारम्भ की। देवता प्रसन्न हुए और उसके घर कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम पद्मावती रखा गया। जब पद्मावती विवाह-योग्य हुई तब जगन्नाथ जी ने ब्राह्मण को स्वप्न दिया कि उसे अपनी कन्या का विवाह भक्त जयदेव से कर देना चाहिए। जब ब्राह्मण प्रस्ताव लेकर जयदेव के पास गया तब जयदेव ने अनिच्छा प्रकट की। पर ब्राह्मण देवाज्ञा की अवहेलना न कर पद्मावती को उनके पास छोड़ गया। जयदेव ने कन्या से पूछा, "तुम्हारी क्या इच्छा है ?" उसने सहज

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भाव से कहा, "अभी तक पिता की इच्छा की अनुगामिनी रही, अब आपकी हूँ, त्यागिये अथवा स्वीकारिये।" जयदेव कन्या के उत्तर से अत्यधिक प्रभावित हुए और उन्होंने उसके साथ पाणिग्रहण कर लिया। कहा जाता है, पद्मावती के पहले जयदेव का एक विवाह हो चुका था। वे विधुरावस्था में पुरुषोत्तम क्षेत्र में रहते थे। वहीं पद्मावती से उनकी भेंट हुई।

गीतगोविन्द की रचना पद्मावती के जीवन-काल में ही हुई, इसका उल्लेख कवि ने गीतगोविन्द के प्रारम्भ में किया है।

पद्मावती के साथ पाणिग्रहण होने के बाद जयदेव तीर्थाटन तथा धर्मोपदेश की इच्छा से घर छोड़कर बाहर चले गये। वृन्दावन की यात्रा करके जब वे जयपुर के मार्ग में थे, तब डाकुओं ने धन के लोभ से उन पर आक्रमण किया और उनके हाथ-पाँव काट डाले। किसी धार्मिक राजा ने उन्हें दयावश उठा लिया और उनका औषधोपचार कराकर उन्हें स्वस्थ बना दिया। एक समय डाकू उसी नगर में साधुओं के वेश में राजा के यहाँ ठहरे। जयदेव का वहाँ बड़ा सम्मान था। अतः जयदेव ने साधु-वेशधारियों को खूब धन दिलवाकर विदा किया। डाकू जयदेव को पहचान गये थे। अतः उन्होंने राजा के कर्मचारियों से यह असत्य बात कही कि "एक राजा के यहाँ जब जयदेव था तब उसने अत्यन्त घृणित काम किया था। राजा ने उसे मार डालने का आदेश दिया था। परन्तु हमने दया कर उसके हाथ-पाँव ही काटे।" किंवदन्ती है कि डाकुओं ने ज्योंही अपनी बात समाप्त की, धरती फट गई और डाकू उसी में समा गये और जयदेव के हाथ-पाँव पूर्ववत् हो गये। पद्मावती भी जयदेव के साथ आकर रहने लगी। एक बार ईर्ष्यावश रानी ने पद्मावती की परीक्षा लेने के लिए कहा कि राजा के साथ आखेट के लिए गये हुए कवि जयदेव की मृत्यु हो गई। यह सुनते ही पद्मावती ने प्राण त्याग दिये। जयदेव जब लौटे तो उन्होंने भगवान् कृष्ण का नाम लेकर उसे जिला लिया। परन्तु पद्मावती ने मनुहार-भरे शब्दों में कहा कि 'मुझे आपके सामने ही जाने में सुख है।' कवि ने सजल होकर इतना ही कहा—"तेरी इच्छा!" पद्मावती ने सदा के लिए आँखें बंद कर लीं। जयदेव खिन्न होकर अपनी जन्मभूमि केन्दुली ग्राम में लौट आये। ये विष्णु स्वामी सम्प्रदाय के कहे जाते हैं। इनकी समाधि आज भी केन्दुली ग्राम में विद्यमान है।

जयदेव की एक ही कृति 'गीतगोविन्द' उपलब्ध है। संस्कृत-साहित्य में इसकी कोमलकान्त-पदावली अनुपम है। जर्मन कवि गेटे ने 'शाकुन्तल' और 'मेघदूत' के समान ही 'गीतगोविन्द' पर प्रशस्ति की वर्षा की है। डा० कीथ ने अपने संस्कृत-साहित्य के इतिहास में इसे 'अप्रतिम काव्य' कहा है। स्वयं जयदेव ने अपने काव्य के सम्बन्ध में गर्वोक्ति की है—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"माध्वीक चिन्ता न भवति भवतः शर्करे कर्कशासि
द्राक्षे द्रक्ष्यन्ति के त्वाममृत मृतमसि क्षीर नीरं रसस्ते।
माकन्द क्रन्द कान्ताधर धरणितल गच्छ यच्छन्ति भावं
यावत् श्रृंगार सारंशुभमिव जयदेवस्य वैदग्ध्यवाचः॥"

जोन्स गीतगोविन्द को Pastoral Drama (गोप नाट्य) कहता है। लसन लिरीकल ड्रामा (गीति-नाट्य), वान श्रोडर यात्रा-प्रबन्ध, पिशाल लेवी मेलो ड्रामा और कीथ इसे 'काव्य' ही कहते हैं। इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में इसे धर्म-नाटक कहा गया है।

गीतगोविन्द के अनुकरण पर (१) भानुदत्त कृत गीत गौरीपति (ईसा० १४वीं शताब्दी पूर्वार्ध), (२) विष्णुसुत कल्याणकृत 'गीत गंगाधर', (३) श्री नाथभट्ट सुतराम या रामजित कृत 'गीत गिरीश' और (४) मैथिली कृष्णदत्तकृत 'गीत गोपीपति' रचे गये।

विलियम जोन्स ने अंग्रेजी में इसका सबसे पहले अनुवाद किया जिससे यूरोपीय विद्वानों का ध्यान आकर्षित हुआ। जर्मन, फ्रेंच, लेटिन आदि में यह अनुवादित हो चुका है। अरनाल्ड ने Songs of Songs के नाम से इसका आंग्ल भाषा में भावानुवाद किया है। जार्ज कीथ ने हाल ही गद्य-काव्य में इसका उल्था किया है और साथ ही रेखाचित्र भी अंकित किये हैं। भारतीय भाषाओं में भी इसके अनुवाद हो चुके हैं। बंगला में (सन् १७३६ में) गिरिधर ने इसका अनुवाद किया। गुजराती में ध्रुव ने (सन् १८२४ में) और मराठी में (सन् १८८९ में) वेतोहरदेव ने समश्लोकी भाषान्तर किया; उसके पश्चात् एक पद्य में और दो गद्य में अनुवाद प्रकाशित हुए। हिन्दी में १७७५ में राजा डालचन्द की आज्ञा से रायचन्द नागर ने सबसे प्रथम अनुवाद प्रकाशित कराया। दूसरा हिन्दी अनुवाद अमृतसर के प्रसिद्ध भक्त रत्न हरिदास का है। इसके बाद बाबू हरिश्चन्द्र का सरस अनुवाद प्रकाशित हुआ जो रसिक जनों में बहुत प्रिय रहा है। हिन्दी के ये अनुवाद ब्रजभाषा में हैं। मैंने एक हस्तलिखित पुरानी ब्रजभाषा की पाण्डुलिपि भी सिवनी (म० प्र०) में देखी है जिसका लिपि-काल १७वीं शताब्दी के आस-पास है, लेखक का नाम स्पष्ट नहीं है। तीन वर्ष पूर्व मैंने खड़ीबोली में इसका रूपान्तर प्रस्तुत किया। सम्भवतः खड़ीबोली में यह प्रथम प्रयास है। मेरे अनुवाद के पश्चात् मेरे अन्य सम-सामयिक मित्र भी खड़ीबोली में अनुवाद कर रहे हैं, ऐसा मुझे ज्ञात हुआ है। इससे 'गीत-गोविन्द' की लोकप्रियता प्रमाणित होती है। इसकी संस्कृत टीकाओं की भी कमी नहीं है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीतगोविन्द

गीतगोविन्द को प्रबन्धात्मक गीतिकाव्य कहा जा सकता है। इसमें केवल तीन पात्र हैं—राधा, कृष्ण और सखी या दूतिका। इसका विषय है विरह-वेदना, यद्यपि इसके प्रेम में मांसलता उभर उठी है, तो भी यह आध्यात्मिकता से सर्वथा रिक्त नहीं है। भक्ति और शृंगार का मधुर सम्मिश्रण हृदयोल्लासकारक है। इसमें कवि की प्रतिभा आलोकित हो उठी है। दूती नायक-नायिका की विरह-पीड़ा को एक दूसरे से निवेदित कर उनमें अनुराग भरती और उन्हें परस्पर निकट लाने का यत्न करती और अन्त में उनका मिलन करा देती है। इस तरह विप्रलम्भ शृंगार की विविध दशाओं का चित्रण कर काव्य में रसोत्कर्ष साधा गया है। राधा कभी मानिनी, कभी वासकसज्जा, कभी विप्रलब्धा, कभी खण्डिता और कभी अभिसारिका के रूप में खिल उठती है। कवि का शब्द-चित्र प्रतिमा-अंकन में अप्रतिम है। गीतों में अनुप्रास, यमक, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अपह्नुति, मुद्रा, अर्थान्तर-न्यास आदि अलङ्कारों की प्रदर्शिनी-सी सजी हुई है। स्थल-स्थल पर शब्दार्थ ध्वनि-साम्य उसकी विशेषता है। कोमलकान्त पदावली पर तो कवि को भी गर्व है। वह प्रारम्भ ही में कहता है—

"यदि हरिस्मरणे सरसं मनो, यदि विलासकलासुकुतूहलम् ।
मधुर कोमलकान्त पदावलिं, शृणु तदा जयदेव सरस्वतीम्
वागदेवता चरित चित्रित चित्त सद्मा पद्मावती चरण चारण चक्रवर्ती
श्री वासुदेवरति केलिकथा समेतमेतं करोति जयदेव कविः प्रबन्धम् ।"

जयदेव की जिह्वा पर मानो सरस्वती नाच उठती थी। संस्कृत के साहित्य-शास्त्र-ग्रन्थों, काव्यप्रकाश, साहित्य-दर्पण और कुवलयानन्द में इनके अलङ्कारों के उदाहरण पाये जाते हैं।

जयदेव ने गौड़ी-रीति को स्वीकार किया है जिसमें दीर्घ समासों की प्रचुरता होती है पर वैदर्भी रीति की झलक भी कृति में दीख जाती है। इस रीति में लघु शब्दों द्वारा प्रसाद गुण युक्त वर्णन मिलता है।

शृंगार रसवर्णन में जयदेव कालिदास और जगन्नाथ की परम्परा में आते हैं। कहीं-कहीं कालिदास और जयदेव की कल्पनाएँ भी परस्पर टकरा जाती हैं। गीत-गोविन्द का रास-वर्णन श्रीमद्भागवत के वर्णन से मिल जाता है। श्रीमद्भागवत के सूत्र दस अ० ४० में अक्रूर-स्तुति में दशावतार का जो वर्णन है वह गीतगोविन्द के प्रथम सर्ग के स्तुति-वर्णन से साम्य रखता है। कवि की सहृदयता मधुमक्षिका के सदृश विभिन्न भाव-पुष्पों से रस-संचित कर अपने में निहित माधुर्य से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसे अभिनव सौष्ठव प्रदान कर देती है। सदियाँ बीत जाने पर भी गीतगोविन्दकार की कोमलकान्त पदावली काव्य-प्रेमियों को स्पंदित करती जा रही है। उसकी निम्न पंक्तियाँ बार-बार कानों में गूँज उठती हैं—

"ललित लवंग लता परिशीलन कोमल मलय समीरे
मधुकर निकर कराम्बित कोकिल कूजित कुंज कुटीरे।"

× × ×

"चंदन चर्चित नील कलेवर पीतवसन वनमाली।"

× × ×

"रति सुख सारे गतमभिसारे मदनमनोहर वेषम्
न कुरु नितम्बिनी! गमन विलम्बनमनुसर तं हृदयेशम्।"

× × ×

"निभृत निकुंज गृहंगतया निशि रहसि निलीय वसन्तम् दि।"—आ

'गीतगोविन्द' में लय-शृंगार की प्रधानता सम्भवतः युगधर्म कही जा सकती है। भक्त अपने आराध्य की क्रीड़ा में लौकिकता भरकर ही भावविभोर हुआ करते थे। कहा जाता है भक्त शिरोमणि चैतन्य महाप्रभु काव्य-प्रकाश की—"यः कौमारहरः स एवहि वरस्ता" आदि पंक्तिओं को गाकर भाव-विभोर हो जाया करते थे। श्लीलता-अश्लीलता वस्तुतः भाव स्थित नहीं है, मन या आँख का दृष्टिकोण है। वे अपने गीतों और पदों में काव्य-रस की रक्षा के साथ-साथ अपना परलोक भी साधा करते थे। यदि गीतों के आध्यात्मिक संकेतों को प्रथक् कर दिया जाय तो वे शुद्ध 'कला सौन्दर्य' के प्रदर्शक रह जाते हैं। यदि इन्हें गुनगुनाकर हम जीवन के विषमय संघर्ष को क्षण भर भी भूल सकें तो इनकी उपयोगिता असंदिग्ध हो जाती है।

यह अनुवाद

कवि जयदेव के गीतों का न यह अविकल-अक्षरशः-अनुवाद है और न सर्वथा भावानुवाद ही। फिर भी इसमें कवि के पद-लालित्य की रक्षा का पद-पद प्रयत्न किया गया है। इसलिए कुछ गीतों की कोमल पंक्तियाँ ज्यों की त्यों आई हैं। यत्र-तत्र मैंने आत्मस्फूर्ति से भी काम लिया है। सफलता-असफलता का निर्णय पाठकों पर है। यदि सफलता है, तो जयदेव की है; यदि असफलता है, तो मेरा है।

इसके गीत सर्वप्रथम नागपुर की 'भारती' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित होते रहे हैं। सच पूछा जाय तो उसके सम्पादक पं० हृषीकेश शर्मा के स्नेहाग्रह से वे पूरे भी हो पाये हैं। अतः उन्हें किन शब्दों में धन्यवाद दूँ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूमिका के भाषाशास्त्र के ख्यात विद्वान् लेखक डा० सिद्धेश्वर जी वर्मा ने सहृदयता से सारे गीतों का मूल के साथ तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन कर समय-समय पर जो समुचित सुझाव दिये हैं, उनके लिए मैं उनका चिर ऋणी हूँ। भूमिका में जिस रूप में उन्होंने कृति का मूल्यांकन किया है उसमें उनके हृदय का रसग्राही रूप अधिक अभिव्यक्त हुआ है। उस में गीतिकाव्य की मान्यताओं पर बड़ी सूक्ष्म मौलिक विवेचना की गई है जो स्वतन्त्र निबन्ध ही है। इनके अतिरिक्त सहृदय मित्र प्रो० सरस्वतीप्रसाद चतुर्वेदी, प्रो० रामनारायण मिश्र आदि ने पाण्डुलिपि के गीतों के अंश सुनकर जो उचित सुझाव दिये हैं, उनके लिए भी मैं कृतज्ञ हूँ।

प्रूफ आदि देखने के काम में श्री 'पारिजात' ने सहयोग दिया है और स्वर-लिपि तैयार कर गीतों को शास्त्रीय गेयता प्रदान करने में श्री 'वर्मा' जी ने श्रम उठाया है। इसके प्रकाशक श्री रामलाल पुरी और उनके सहयोगियों ने कलापूर्ण रुचि के साथ इसे प्रस्तुत किया है। अतः ये सब धन्यवादार्ह हैं।

धरमपेठ ऐक्सटेंशन
नागपुर

विनयमोहन शर्मा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पहला सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"हरि-राधा मदमाते । यमुन-पुलिन के कुंज-कुंज से क्रीड़ा करते जाते ।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'मेघ भरित अम्बर अति श्यामल तरु तमाल की छाया,
कान्ह भीरु ले जा राधे ! गृह, व्याप्त रात की माया ।'
पा निर्देश यह नन्द महर का हरि-राधा मदमाते,
यमुन-पुलिन के कुंज-कुंज से क्रीड़ा करते जाते ।

× × ×

चारु चरित 'वाणी' के चित्रित मन-मन्दिर में जिसके,
पद्मावती चरण-चारण से अँग-अँग सिहरे जिसके ।
कवि जयदेव रचित है (जिसकी मति-गति अति तल्लीना)—
वासुदेव-श्री-केलि-कथामय, यह प्रबन्ध रस-भीना ।
यदि हरि-चिन्तन-रस आतुर मन, यदि रति-भाव हुलासे ।
तो मधु कोमलकान्त पदावलि, सुनौ, स्वर्ग-सुख भासे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१)

जय जगदीश हरे !
प्रलय-जलधि से नौ सम न्यारे
वेद उबारे, हास्य-सँवारे।
केशव मत्स्य स्वरूप लसे, जय जगदीश हरे !
राजित पृष्ठे निज क्षिति विपुला,
धरणि धरण-किण अंकित बहुला,
केशव कच्छप-रूप लसे, जय जगदीश हरे !
दशन अग्र धरणी यह लग्ना,
शोभित चन्द्र कलंक निमग्ना।
केशव सूकर-रूप लसे, जय जगदीश हरे !
अम्बुज कर खर नख से अपने,
हिरण्यकशिपु के हर सब सपने।
केशव नरहरि-रूप लसे, जय जगदीश हरे !
छलित नृपति बलि अद्भुत वामन,
पद नख नीर हुए जन पावन।
केशव वामन-रूप लसे, जय जगदीश हरे !
'वीर - रुधिर'* से धो पापों को,
और शमन कर भव-तापों को।
केशव भृगुपति रूप लसे, जय जगदीश हरे !
दिक्पति कांति हुई कमनीया,
पा रावण की बलि रमणीया।
केशव रघुपति-रूप लसे, जय जगदीश हरे !
घन सम वसन विशद तन धारे,
यमुन-तरंगित हल-भय मारे।
केशव हलधर-रूप लसे, जय जगदीश हरे !

*क्षत्रिय के लिए प्रयुक्त।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निन्दे यज्ञ नियम श्रुति-मग के,
माने मानव सम पशु जग के।
केशव बुद्ध-शरीर लसे, जय जगदीश हरे!
म्लेच्छ-नाश-त्रास धरे विशाला,
धूमकेतु-सम बने कराला।
केशव कल्की-रूप लसे, जय जगदीश हरे!
श्री जयदेव कथित 'हरि'-लीला,
सुनो सुखद यह शुभ गतिशीला।
केशव दशविध-रूप लसे, जय जगदीश हरे!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

धृत कमला-कुच-मंडल, श्रुति कुंडल हे,
कलित ललित वनमाल, जय जय देव हरे !
दिनमाणि मंडित भव खंडित हे,
मुनिजन-मानस-हंस, जय जय देव हरे !
कालिय विषधर गंजन, जन रंजन हे,
यदुकुल नलिन दिनेश, जय जय देव हरे !
मधु-मुर नरक विनाशन, गरुड़ासन हे,
सुर-कुल-केलि निदान, जय जय देव हरे !
अमल कमल दल लोचन, भव-मोचन हे,
त्रिभुवन-भवन निधान, जय जय देव हरे !
जनक-सुता कृत भूषण, जित दूषण हे,
समर शमित दशकंठ, जय जय देव हरे !
अभिनव जलधर सुन्दर धृत मन्दर हे,
श्रीमुख चन्द्र चकोर, जय जय देव हरे !
तव चरणों में हम नत हे,
करो कुशल अखिलेश ! जय जय देव हरे !
श्रीजयदेव लिखित यह सुन्दर,
मंगल उज्ज्वल गीत, जय जय देव हरे !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

हरि हरें व्यथा सब मन की ।
जिनके वक्षस्थल पर अंकित केशर कमला-स्तन की,
जिन पर छाई शोभा रति के श्रम के मंजुल कण की,
हरि हरें व्यथा सब मन की ।

× × ×

कौन वह दुर्गम वनों में,
त्रस्त, मातल डोलती है ?
फूल वासन्ती शरीरी,
कृष्ण का मन तोलती है ?
देख कर कन्दर्प ज्वर से ।
क्लान्त; मन को खोलती है
एक सहचरि हो सदय यह
राधिका से बोलती है—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"कौन वह दुर्गम वनों में, त्रस्त, मातल डोलती है ?"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(४)

'सरस वसन्त समय'

ललित लवंग लता परिचुम्बित कोमल मलय समीर,
मधुकर-निकर कलित कोकिल से कूजित कुंज-कुटीर।
लहर उठता रमणी का चीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर

काम-पीड़िता पांथ-वधू का व्यापित बहुल विलाप,
अलिकुल संकुल सुमन मनोहर पादप बकुल कलाप।
नहीं धरते हैं विरही धीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर

मृगमद-सौरभ सम विस्तारित परिमल मधुर तमाल;
युवजन मन-वेधक मनसिज-कर नख रुचि किंशुक-जाल।
हृदय में उठती रह रह पीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर

मदनराज के कनक-दंड-सा केसर-कुसुम-विकास,
पाटल पर भौंरों की छवि का अंकित मधुर विलास।
जुड़ी है मधु-रसिकों की भीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लज्जागलित विश्व का करता तरुण करुण उपहास,
बिद्ध केतकी कुंत मुखों से विरही मन—आवास।
हार जाते हैं पल में वीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर

माधविका-मालती-गंध अब रही दिशा में व्याप,
मोहित मुनि-मन विकल तरुण जन खिंचते अपने आप।
दिखायें कैसे हिय को चीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर

वायु चंचलित लता माधवी से आलिंगित आम,
परिपुष्पित है; पूत जमुन-जल से वृन्दावन-धाम।
समाया उसमें सागर क्षीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर

श्रीजयदेव काव्य केवल हरि-चरण-स्मृति का सार,
सरस बसन्त समय वन-वर्णन अनुगत मदन-विकार।
लहर उठता रमणी का चीर
नाचते हैं हरि सरस अधीर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(५)

परिरम्भ मदिर रस मातल,
प्रमदा परिवेशित हरि को—
दिखला; राधा से आली,—
बोली पीकर मधु छवि को—
चंदन चर्चित नील कलेवर, पीत वसन वनमाली
केलि चंचला मणि कुण्डल गति स्मितमुख शोभाशाली।
काम-मोहिता, रूप-गर्विता गोपीजन-कर साधे,
विलस रहे हैं श्रीहरि आतुर, निरखि, विलासिनि राधे !
कोई पीन पयोधर गोपी युग भुज में बँध जाती
हरि-गायन के अन्त साथ उठ पंचम स्वर में गाती।
कोई लास लोल लोचन से बने सहज मतवाले,
मधुसूदन के मुख सरसिज में ठगी, दीठ-मधु ढाले।
चारु नितम्बवती कोई मिस कानों में कुछ कहने—
पुलक कपोल चूम श्रीहरि के लगी प्रेम-रस बहने।
केलि-कलाकुल कोई गोपी, जमुना-जल के तीरे,
ले जाने हरि, वसन खींचती वंजुल वन से धीरे।
जिसकी ताल समय कर-चूड़ी वंशी-स्वर में खनकी,
रास-सखी की स्तुति श्रीहरि ने जी भर भर कर की।
किसी सखी को भुज में भरते, और किसी से रसते,
गीले कर फिर किसी अधर को, किसी आँख में हँसते।
कहीं किसी के पीछे-पीछे छाया से हरि चलते;
वृन्दावन के लता-कुंज की क्रीड़ा कहते-कहते—
मग्न हुए रस-सरि में कवि 'जय' निशि दिन बहते-बहते,
श्रोता भी हों मुक्त क्लेश से सब कुछ सहते-सहते।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(६)

हैं विहर रहे मधु-ऋतु में
अनुरागमयी आँखों से—
कोमल श्यामल सरसिज की
मधु स्निग्धमयी पाँखों से।
हैं अङ्ग अङ्ग आलिंगित,
मृदु गोपीजन-अंगों से—
शृंगार-मूर्ति हरि दीपित—
जन करते रस-रंगों से—

× × ×

सतत सर्प-पीड़ा से तापित
मलय पवन हिमदेशे
बहने को आतुर रहता है
निशि दिन कोमल वेशे
मधुर आम के बौरों से या
बढ़ता जाता मिलने
जो कोकिल की 'कुहू कुहू' सुन
मद से लगते खिलने

× × ×

मधु रास-मुग्ध सखि सम्मुख
मातल राधा भर भुज में—
हरि को; बोली—'प्रिय, कितना
है अमृत मुख-सरसिज में!'
फिर गीत-स्तुति मिस सत्वर
वह चूम उठी मुख उनका।
प्रिय-चुम्बन से प्रमुदित हरि
अब दूर करें दुख सबका।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दूसरा सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"हरि-मूरत का ध्यान, हो आता अनजान"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१)

राधा बोल उठी मन की
लख हरि गोपीजन की क्रीड़ा निशि दिन वृन्दावन की
अलिकुल-गुँजित लता-कुंज में छिपकर जीवन-धन की ।।
लीला से ईर्षाहत होकर भूली सुध-बुध तन की ।
राधा बोल उठी मन की ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

हे सखि ! ·
कँपित अधर मधु-ध्वनित वेणु-स्वर,
चलित दृगंचल चंचल शिर, भर—
गति कपोल द्वय लोल वलय वर।
रास - विलास - हास - कृत मनहर।
हरि-मूरत का ध्यान,
हो आता अनजान।

चन्द्रक चारु मयूर शिखण्डित,
कोमल केश वलय आमंडित।
प्रचुर पुरन्दर धनु - अनुरंजित,
सघन मेघ-छवि वपु बहु सज्जित।
हरि-मूरत का ध्यान
हो आता अनजान।

गोप वधू चुम्बन-रस लोभित,
अधर वधूक स्मित मधु शोभित।
पुलक युवति-भुज अति आलिंगित,
पद-कर मणि-द्युति निशि-तमचूर्णित।
हरि-मूरत का ध्यान,
हो आता अनजान।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चन्दन तिलक ललाट विचर्चित,
जलद पटल में विधु सम दर्शित।
युवती पीन पयोधर मर्दित,
अपनी निर्दयता पर हर्षित।
हरि-मूरत का ध्यान,
हो आता अनजान।

युग्म कपोल रत्न मणि मंडित,
मकर मनोहर कुण्डल लम्बित।
सुन्दर पीत वसन परिवेष्टित,
मुनि, सुर, असुर, पद्म पद पूजित।
हरि-मूरत का ध्यान,
हो आता अनजान।

विशद कदम्ब तले उपवेष्टित,
जन-मन से कलि-भय अपवारित।
निज अपाँग से मम मन पूरित,
सुन्दर मोहन कवि 'जय' वर्णित।
हरि-मूरत का ध्यान,
हो आता अनजान।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

सपनों में सुधि बन कर आते।
सखि वे भुला भुलाकर भाते।
निरगुनिया' के गुन ही मन में 'गुन-गुन' स्वर भर जाते।
पर-रत होने पर भी मुझ में रति बनकर ढर जाते।
सखि! वे भुला-भुलाकर भाते!
सपनों में सुधि बनकर आते!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(४)

राधा बोल रही जी की

निशि अँधियारी ऋतु वसन्त सखि ! घन निकुंज वन नन्दन री !
खोज रहे कब से दिशि-दिशि में थकित चकित दृग खंजन री !!
ले चल वहीं थमे जिससे यह शाश्वत जी का क्रन्दन री !
रति-रस-भीने जहाँ विहँसते छिपे खड़े नँदनन्दन री !!
प्रथम मिलन की वेला आई चढ़ व्रीड़ा के स्यन्दन री !
किन्तु मधुर बोलों से उनके बनी स्वयं रस-रंजन री !!
भूली वदन वसन की सुधि सब, भूली पूजा-वन्दन री !
मेरी शैया किसलय, उनकी मेरे उर का स्पन्दन री !!
भूली किन अधरों ने किनका लिया मधुर कब चुम्बन री !
किन घड़ियों में हुआ हमारा युग-युग का परिरम्भण री !!
मेरे मीलित लोचन, उनका पुलक ललित वपु-कम्पन री !
श्रम-सीकर से सिंचित तन यह, उनमें रति का गुंजन री !!
नख-क्षत उर यह, नव कुसुमों का बिखरा कबरी-बन्धन री !
मेरी ये पायल बज उठतीं रह-रहकर मृदु 'झन-झन' री !!
मुरझाई मैं इधर, उधर वे मुकुलित केशि-निकन्दन री !
राधा वर्णित मधु क्रीड़ा का करता 'कवि' अभिनन्दन री !!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(५)

ले चल उन कुँजों में जिनमें ब्रज-बालायें घेरे—
रहती हैं श्रीहरि को आतुर, पर दिखते ही मेरे—
हाथों से उनके गिर पड़ती वंशी सहज सबेरे।[१]
दूर कटाक्षों से कर देते गोपीजन के भेरे ॥[२]
मुझे जलाते हैं अशोक के कोमल किसलय फूल।
बहने वाला मृदु समीर भी छू उपवन सर-कूल।
अलि गुंजित मधु आम्र-मंजरी चुभती है ज्यों शूल।
जग सरसा है, पर मेरे तो हिय में उड़ती धूल ॥

[१]सबेरे=शीघ्र। [२]भेरे=समूह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तीसरा सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"मैं अपराधी रोक न पाया, उसको आकुल क्षण में"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१)

जग-बन्धन सम प्राणों की, मानिनि राधा को मन में—
अंकित कर भूल गये हरि, प्रिय व्रजवधुओं को क्षण में।
अनुतापित पीड़ित फिरते, मनसिज-बाणों के व्रण में।
डूले से जमुन-पुलिन पर, भूले से वृन्दावन में।

× × ×

रूठ गई अपमानित हो लख मुझको गोपीजन में।
मैं अपराधी रोक न पाया उसको आकुल क्षण में।
क्या न करेगी ? क्या बोलेगी विरह-विदग्धा वन में ?
राधा बिन है शेष मुझे क्या जगती में, जीवन में ॥
झूल रहा टेढ़ी भौंहोंमय, भौंर भ्रमित मुख उसका,
रंग हुआ है रिस से सत्वर लाल कमल-सा जिसका।
राजित है वह सुन्दर प्रतिमा मन-मन्दिर में मेरे,
साँसें करती रहतीं जिसके फेरे साँझ-सवेरे।
किस वन में प्रिय जाऊँ, खोजूँ पद-चिह्नों को तेरे ?
कब तक रहूँ बरसता आँखों में बदली को घेरे ?
जान रहा ईर्षों से तन्वी ! छिन्न हृदय है तेरा।
कहाँ गई है ? सुन पायेगी क्या यह अनुनय मेरा ?
मेरे सम्मुख दीख रही तू पल पल आती जाती,
क्यों न सजनि ! फिर सहज भाव से युग भुज में बँध जाती ॥
क्या न क्षमा अब कर दोगी निज अपराधी को रानी ?
मधुमयि ! दर्शन दे कष्टों की कर दो अन्त कहानी ॥
भूल न होगी अब भविष्य में, यह आँखों का पानी—
साक्षी है, कवि 'जय' के स्वर में गूँजी मोहन-वाणी ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

× × ×

वे स्पर्श जनित सुख कोमल, चल दृष्टिक्षेप रस भीने,
वह वदन कमल मधु सौरभ, वे वचन सुधा मधुलीने।
वे मधुर अधर बिम्बा सम, तन्मय करते यों मन को
जैसे समाधि में योगी, विस्मृत कर देते तन को।
संलग्न ध्यान सखि! तुझ में, पर विरह-व्यथा यह मेरी
भूली है लेष न मुझको, घेरे है बनी अहेरी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

उर पर नाग नहीं है, यह तो श्रेणी कुवलय-दल की।
विष की आभा नहीं, कंठ में माला नीलकमल की।
भस्म नहीं है, शीतल करने विरह-ताप की ज्वाला—
लगा रहा मलयज-रज तन में मैं विरही मतवाला।
'शिव' के धोखे 'अशिव' कृत्य क्यों करते मनसिज ! भोले
रोष भरे बरसाते हो शर निशिदिन तरकस खोले।
आम्रमंजरी के बाणों को मत निज कर में धरना
यदि धरना तो धनु पर धर कर शर-संधान न करना।
देख रहे हो मृगनयनी के शर से हिय का छिदना
पुनः तुम्हारे बाणों का क्या सह पाऊँगा बिंधना ?
निज क्रीड़ा से जीत विश्व को, उस पर शासन करते···
मूर्छित जन पर कर प्रहार क्यों शौर्य-प्रदर्शन करते ?

× × ×

त्रिभुवन विजयी अस्त्रों को, अर्पित राधा को ऐसे—
कर समा गया स्मर उसमें, कोई हारा हो जैसे।
भौंहों में 'धनुष' बसा है, शर-पाँत दीठ में बैठी !
कानों की पाली दिखती, मानो प्रत्यंचा ऐंठी॥
हे तन्वि, नेत्र-शर तेरे, नित छेद रहे हैं उर को।
वे व्याल केश भी रह रह, डसते रहते हैं मुझको॥
वे सरस मधुर बिम्बाधर, मुझको मोहाकुल करते।
उन्नत उरोज सखि ! तेरे, क्यों जी में जीवन भरते ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चौथा सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"और सखी की विरह-कथा सब धीरे-धीरे बोली।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्निग्ध माधव

यमुना तीरे, वेतस कुंजे, बैठे हैं यदुवंशी।
राधा के चिन्तन में अपनी भूले लकुटी-वंशी॥
इसी समय सम्मुख हो कोई छाया-सी आ डोली।
और सखी की व्यथा-कथा सब धीरे-धीरे बोली—

(१)

"वह विरह-विदग्धा दीना
माधव, मनसिज विशिख भयाकुल तुम में है तल्लीना।
वह विरह-विदग्धा दीना

चंदन और चंद्र-किरणों से होती अधिक अधीर,
अहिगण गरल समान विमूच्छित करता मलय समीर।
वह विरह-विदग्धा दीना
माधव, मनसिज-विशिख भयाकुल तुम में है तल्लीना।

मदन-शरों से अपने पिय की रक्षा में बेहाल,
उर पर बिछा रही है रह रह सजल कमलिनी-जाल!
वह विरह-विदग्धा दीना
माधव, मनसिज विशिख भयाकुल तुम में है तल्लीना।

शोभित लोल विलोचन जल ढल आनन कमल उदार,
राहु दलित विधु से बह उठती ज्यों अमृत की धार।
वह विरह-विदग्धा दीना
माधव, मनसिज विशिख भयाकुल तुम में है तल्लीना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मृगमद से हरि—चित्र खींचती फिर लख उसमें 'काम',
आम्र-मंजरी शर धर कर में, करती सलज प्रणाम।
जिन चरणों में रत माधव! वह, वही बँधाये धीर
देख विमुख, यह चंद्र जला कर बढ़ा रहा है पीर।
वह विरह-विदग्धा दीना
माधव, मनसिज विशिख भयाकुल तुम में है तल्लीना।
ध्यानमग्न हो चौंक समझती सम्मुख हैं यदुवीर,
कभी विलपती, कभी कलपती होकर अधिक अधीर,
वह विरह-विदग्धा दीना
माधव, मनसिज-विशिख-भयाकुल तुम में है तल्लीना।

× × ×

गृह भी वन सा भास रहा है, (बजी कौनसी भेरी ?)
उसे सखी भी दीख रही हैं घेरे बनीं अहेरी।
श्वासों का उत्ताप जलाता है दावा की आगी।
'काम'—व्याघ्र से डरी-डरी फिरती हरिणी-सी भागी॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

है विरह की पीर भारी,
छीजती जाती 'बिचारी'।
हार उर का भार बनता,
मलय विष का सार बनता।
श्वास का आधार बनता?
दहन का उपचार बनता।
है विरह की पीर भारी,
छीजती जाती 'बिचारी'।
आँख में आँसू उमँगते
कमल-कण सर में तरँगते।
खोजती दिशि दिशि सहमते—
पिय! कहाँ हो तुम विरमते?
है विरह की पीर भारी
छीजती जाती 'बिचारी'।
पल्लवों की सेज लखती,
'आग सी'—कहती—'सुलगती!'
हाथ पर हनु धर सरसती।
बाल-विधु शोभा बरसती।
पर विरह की पीर भारी।
छीजती जाती 'बिचारी'
अहर्निश हरि—नाम जपती
मृत्यु क्षण क्षण झलक टलती
गीत में 'कवि' भींगते हैं
हरि स्वयं आ रीझते हैं
है विरह की पीर भारी
छीजती जाती 'बिचारी'!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

कभी पुलकती, कभी विलपती और विसुध है होती,
'सी सी' करके कभी सिहरती, कभी विहँसती, रोती।
गिरती, उठती, चलती, फिरती, जगती-सी सो जाती,
तीव्र ज्वराकुल-सी लगती है, पीड़ा में खो जाती।
वैद्य! रसौषधि दे उसको अब फिर से चेतन कर दो।
इंगित-भाषिणि की जिह्वा में फिर से वाणी भर दो।
स्पर्शामृत से 'स्मर'-बाधा को हे हरि! सत्वर हर लो,
काँप रही हूँ—कहीं न उर को निठुर वज्र सा कर लो।
चंदन, चंद, कमल—शीतल द्रव उसे जलाते रहते,
किन्तु तुम्हारे शीतल तन का चिन्तन करते करते—
विगत-ताप वह हो जाती है और विहँस है जाती—
जादूगर! है क्या रहस्य यह; मैं न समझ हूँ पाती?
जो राधा पल भर भी पहले विरह न थी सह सकती,
("पलकें क्यों बरबस लगती हैं"—विधि को कोसा करती)
वही आज पुष्पित मधुऋतु में निरख तरुण आमों को
क्या जाने कैसे रख पाती है पापी प्राणों को?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाँचवाँ सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

“तव विरहे वन माली, पल-पल आकुल आली !”

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृष्ण का सखी के प्रति

मैं बैठा हूँ यहीं और सखि ! राधा से जा कहना—
"कब तक निठुर ! और उत्पीड़न मुझको है यह सहना ?"

सखी का राधा के प्रति

(१)

तव विरहे वनमाली !
पल पल आकुल आली !
विवश बनातीं मदन-लहरियाँ मिलकर मलय समीरे,
चलदल-सा चल जाता जी जब, हँसतीं कलियाँ धीरे ।
तव विरहे वनमाली !
प्राण जलाने आती हैं नभ से चन्दा की किरनें,
मदन-शरों से व्याकुल होकर लगते उठने-गिरने ।
तव विरहे वनमाली !
मधुपों की 'गुनगुन' से मूँदे हैं कानों को रहते,
रात रात भर सुधि—पीड़ा में हैं आँखों से बहते ।
तव विरहे वनमाली !
कलित धाम परित्याग बसे हैं वन में तप-सा साधे,
दर्दी से धरती पर लेटे रटते "राधे ! राधे !"
तव विरहे वनमाली !
कवि जयदेव लीन हैं अतिशय हरि के विरह-विलासे,
भाता है यह रस जिसको अति उसमें ज्ञान प्रकाशे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

"रति-सुख-सारे, गत अभिसारे, मदन मनोहर वेशम्"
न कर नितम्बिनि ! गमन-विलम्बन, अनुसर निज "हृदयेशम्"
धीर समीरे यमुना-तीरे राज रहे वनमाली,
गोपी - पीन - पयोधर -मर्दन - चंचलकर - युगशाली।
नाम सहित संकेत ध्वनित कर कोमल वेणु बजाते,
तव तन चुम्बित पवन-रेणु से उर को समुद सजाते।
पत्ती के उड़ने से तरु के पत्ते जब हिल जाते,
आती हो यह जान हृदय में शंका से खिल जाते।
शीघ्र वहीं पर किसलय-दल की शय्या ललित रचाते,
और पंथ पर चौंक चौंक कर आँखें सजल बिछाते।
त्याग मुखर नूपुर सखि ! सत्वर साड़ी नीले रँग की—
पहिन, चलें इस तिमिर-पुंज में कुंज-ओर; क्यों ठिठकी ?
रति-विपरीते, पीते ! राजित घन पर बिज्जु-शलाका,
हरि-उर-उपहित मौक्तिक माला होगी तरल बलाका।
पंकज-नयने ! दल-शय्या पर अपने जीवन-धन से,
बाह्य आवरण त्याग न मिलती कैसे प्रमुदित मन से ?
रैन सिरानी, पिय अभिमानी कर न सजनि ! अब देरी,
जा कर उनसे सत्वर मिल ले—इतनी अनुनय मेरी।
तेरे आने की आशा जब लगती पल पल घटने,
तभी विकलता बढ़ जाती है, लगता धीरज हटने।
कभी प्रतीक्षा-दृग से लखते और उसाँसें भरते,
होकर भ्रांत कुंज में जाते फिर आँखों से ढरते।
बार बार शय्या रचते हैं—खूब साधना साधे,
मदन-कदन-परिक्लान्त कान्त हैं तेरे री सखि ! राधे !
श्री जयदेव कथित यह वाणी हरि-राधा-रस सानी,
मुदित हृदय उसका करती है जिसने 'ध्वनि' पहचानी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

छठा सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"हे हरि, राधा आवास-ग्रहे—
पल पल दिशि दिशि देख रही है।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे हरि, राधा आवास-गृहे—
कब तक वियोग का त्रास सहे ?
पल पल दिशि दिशि देख रही है
मधुर अधर रस पीते
"कहाँ दूर हो, कहाँ निकट हो,
हे मेरे मनचीते ?"
यह कह कर तुमसे मिलने को
ज्यों व्याकुल हो बढ़ती
गिर पड़ती है पथ में क्षण में,
क्षण में है उठ पड़ती
हे हरि राधा आवास-गृहे—
कब तक वियोग का त्रास सहे ?
किसलय कोमल वलय धार कर
रति-चिन्ता-रस साने
कभी रचाती रास मुग्ध हो
माधव निज अनुमाने
बार बार कहती है "सखि कब
आयेंगे वनमाली ?"
जान जलद सम तम को—"तुम हो"
फूल उठी मतवाली
हे हरि, राधा आवास-गृहे—
कब तक वियोग का त्रास सहे ?
करने लगी उसी का चुम्बन—
आलिंगन मधुमाती।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लख बिलम्ब वह वासकसज्जा,
लज्जा खो तन-छीनी
रोती और विलपती रहती ।
कवि 'जय' की यह वाणी—
सुनते हैं जो जन इस जग में
पाते गति कल्याणी
हे हरि, राधा आवास-गृहे
कब तक वियोग का त्रास सहे ?

× × ×

विपुल पुलक तन, अतुल ललक मन, ध्यान-सुरति-सुख लीना ।
मिलन-कल्पना-रस सागर में डूब रही मति-दीना ॥
पत्तों की आहट से आने की जब शंका होती ।
सजा अंक मृदु शैया सत्वर उत्सुक है अति होती ॥
कल्प, तल्प, संकल्प भाव में यद्यपि उलझी रहती ।
तुम बिन नहीं काट पाती निशि, घड़ियाँ गिनती रहती ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सातवाँ सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"विफल रूप यौवन नव मेरा जो न उन्हें यह भाये ।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१)

राधा का चिन्तन

इसी समय 'कुलटा-कुल' का 'संकेत-गमन' अवरोधे,
प्रकटित कर लांछन-श्री अपनी पातक को परिशोधे
बृन्दावन के कुंज मध्य अब इन्दु अंशुसह हासे;
दिशा-सुन्दरी के मुख पर ज्यों चन्दन-बिन्दु विलासे।

× × ×

चढ़ता चन्द्र गगन में लख कर हरि-आगम में बाधा—
बिलख बिलख परितापमयी अति रो उठती है राधा।

× × ×

बीत रहा संकेत-समय पर वे न कुंज में आये!
विफल रूप यौवन नव मेरा जो न उन्हें यह भाये।
मैं भोली ठग गई सखी के आश्वासन-वचनों में।
अब किसकी शरणों में जाऊँ भूली-सी सपनों में!

× × ×

जिसकी मिलन-चाह ले इतनी गहन निशा में आई,
वही हृदय को मदन-शरों से छेद रहा री माई!
विरह-अनल में जलूँ कहाँ तक? हुआ विधाता वाम।
मरना ही अच्छा है अब तो, व्यर्थ हुई बदनाम!

× × ×

इधर मधुर यह रात मुझे अब रह रह रुला रही है,
उधर अन्य कृत सुकृत कामिनी हरि को भुला रही है!
मणि-भूषण दूषण लगते हैं, पिय बिन कुछ न सुहाता,
कुसुम देह पर कुसुम-हार भी वहन नहीं हो पाता!

× × ×

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिनके लिये त्याग महलों को बैठी वेतस-वन में,
क्या आ पाई सुधि भी मेरी क्षण भर उनके मन में ?
मंजुल वंजुल लता-कुंज में मुझे बुला एकाकी,
कहाँ बिलसने लगे छली वे, झलकी किसकी झाँकी ?
अथवा आये यहीं हाय पर, छाई अति अँधियारी,
यहाँ-वहाँ क्या मुझे खोजते भटक रहे बनवारी ?
श्रीहरि-चरण-शरण 'कवि जय' की प्रमदा सम मृदुवाणी,
भक्तों के भावुक हृदयों में गूँज उठे कल्याणी !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

सखी के प्रति

(राधा कल्पना कर रही है कि कृष्ण का संकेत-स्थल में न आने का कारण उनकी किसी अन्य व्रजबाला के साथ विलास-क्रीड़ा है।)—

स्मर— समरोचित— विरचित— वेशा
गलित—कुसुम—वर —विलुलित— केशा
हरि — परिरंभण —वलित —विकारा
कुच—कलशोपरि तरलित धारा—
शोभित है युवती री कोई
हरि से विलस रही जो खोई।

अलक—ललित मृदु आनन चन्द्रा
अधर—पान—मुद अधिकृत तन्द्रा
चंचल कुंडल ललित कपोला
मुखरित रसन जघन गति लोला
शोभित है युवती री कोई
हरि से विलस रही जो खोई !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हरि—आलोकित लज्जित हँसिता
बहु विधि कूजित रति—रस—रसिता
विपुल पुलक पृथु वेपथु भंगा
श्वसित निमीलित उदित अनंग।

शोभित है युवती री कोई
हरि से विलस रही जो खोई !

श्रमजल कण भर सुभग शरीरा
हरि—उर पतित सुरति—रणधीरा
(श्री जयदेव कथित यह 'लीला'
कलि-मल सहज विनाशनशीला।)

शोभित है युवती री कोई
हरि से विलस रही जो खोई !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

रमते आज मुरारी

यमुन-पुलिन के सघन कुंज में रमते आज मुरारी
(प्रिय की अमर सुहागिनि होकर जीती बाजी हारी !)
रचते मृगमद तिलक पुलक कर मदन-मुदित मुख उसके
चुम्बन वलित अधर लगते हैं, मधुर रसातुर जिसके ।
(गोरे मुख पर श्याम तिलक ने ऐसी री छबि धारी ।
मिरग साथ ज्यों खिल उठती है चन्दा की उजियारी)
यमुन-पुलिन के सघन कुंज में रमते आज मुरारी
(पिय की अमर सुहागिनि होकर जीती बाजी हारी !)
चपला से, कुवरक—कुसमों से, सजल मेघ से काले—
केशों को उसके सजते हैं (भीगे से मतवाले ।)
मृगमद-रंजित कुच युग-गगने नखपद शशि से विलसे
चमक रहे मणि-हार अमल अति चम-चम तारक-दल से ।
यमुन-पुलिन के सघन कुंज में रमते आज मुरारी ।
(पिय की अमर सुहागिनि होकर जीती बाजी हारी ।)
तालखण्ड से युग भुज, करतल राजित नलिनी दल से,
पहिनाते मरकत-कंकण जो लगते छाये अलि से ।
मनसिज—कनकासन सम उसके मांसल रतिगृह-जघने)
सजा रहे तोरण सम कांची (स्मिति अंकित वर वदने ।)
यमुन-पुलिन के सघन कुंज में रमते आज मुरारी ।
(पिय की अमर सुहागिनि होकर जीती बाजी हारी ।)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कमला के आवास—हृदय-पर पग उसके हैं धरते,
और हाथ से 'जावक'-रचना फिर मातल हो करते।
'पापी' के पर-तिय-विलास को देखूँ आँखें मींचे ?
कब तक विरस प्रतीक्षा सखि ! मैं करूँ विटप के नीचे ?
यमुन-पुलिन के सघन कुंज में रमते आज मुरारी।
(पिय की अमर सुहागिनि होकर जीती बाजी हारी।)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनिल तरल मृदु जलज नयन के,
विकसित सरसिज ललित वदन के।
अमिय मधुर अति मंजु वचन के,
थल जलरुह से रुचिर चरण के।

मिले, जिसे हैं सरस भाव से, उसे, कभी वनमाली।
'पल्लव' 'स्मर-शर' 'मलय' चन्द—सब जला न पाते आली॥

सजल जलद सम फुल्ल वदन के,
कनक—निकष सम पीत वसन के।
सकल युवन जन श्रेष्ठ तरुण के,
प्रेरक कवि 'जय' काव्य करुण के।

मिले, जिसे हैं सरस भाव से, उसे, कभी वनमाली,
विरह, स्वजन-स्वर-व्यङ्ग दरद—सब जला न पाते आली।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आठवाँ सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किसी तरह दुख-रात बिताई, हो आया जब भोर !
चरणों पर झुकते, अधरों पर हँसते दीखा 'चोर' !
किन्तु नहीं राधा का इससे नाचा रे मन मोर !
हुई क्षुब्ध; सागर में जैसे लहरों का हो शोर !

राधा का कथन

नैश जागरण से रतनारी बनी सखे ! हैं आँखें !
(रह-रहकर झप-झप उठती हैं मृदु पलकों की पाँखें !)
छलक रही अनुराग-माधुरी अलसाई 'कोरों' से !
(कौन बँधी सी झलक रही है रेशम के डोरों से ?)
हे माधव ! हे कमल विलोचन ! वनमाली ! रसभीने !
अपनी व्यथा-हारिणी के ढिग जाओ हे परलीने !
उसकी कजरारी आँखों के चुम्बन से हैं काले—
अरुण अधर ये छली ! तुम्हारे, दीख रहे मतवाले !
स्मर-संगर-खर नख-क्षत-रेखा अंकित वपु पर ऐसे—
नील पटल पर रति-जय लेखा, स्वर्ण-लिखित हो जैसे !
हे माधव ! हे कमल विलोचन ! वनमाली ! रसभीने !
अपनी व्यथाहारिणी के ढिग जाओ हे परलीने !
कमल चरण के स्रवित अलक से उर भीगा; (क्या सीखे) ?
अन्तर का स्मर-तरु-किसलय सा छाया बाहर दीखे !
लख अधरों पर दन्तक्षतों को छिद जाता जी मेरा !
फिर भी क्यों कोई कहता है, "राधे ! है हरि तेरा !"
हे माधव ! हे कमल विलोचन ! वनमाली ! रसभीने !
अपनी व्यथाहारिणी के ढिग जाओ हे परलीने !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन भी तन सा कृष्ण ! तुम्हारा बना हुआ है काला,
अपनी जान जलाते रहते ! (पड़ा निठुर से पाला !)
अबला-वध की साध लिये तुम वन वन डाल रहे हो !
बालचरित का प्रथम पृष्ठ क्या फिर से खोल रहे हो ?
हे माधव ! हे कमल विलोचन ! वनमाली ! रसभीने !
अपनी व्यथाहारिणी के ढिग जाओ हे परलीने !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देख तुम्हारे उर पर 'उसके' चरण-कमल की छाया !
भीतर का ही प्रेम-भाव ज्यों बाहर हो कर आया,
हुआ न मुझ को शोक, हुई मैं लज्जा से अति नीचे !
(मेरे रहते कौन सुहागिनि मेरे पिय को खींचे !)

× × ×

श्री जयदेव कथित रति-वंचित खंडित युवती जन का—
यह विलाप है, छू लेता जो अन्तर भावुक मन का !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नवाँ सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

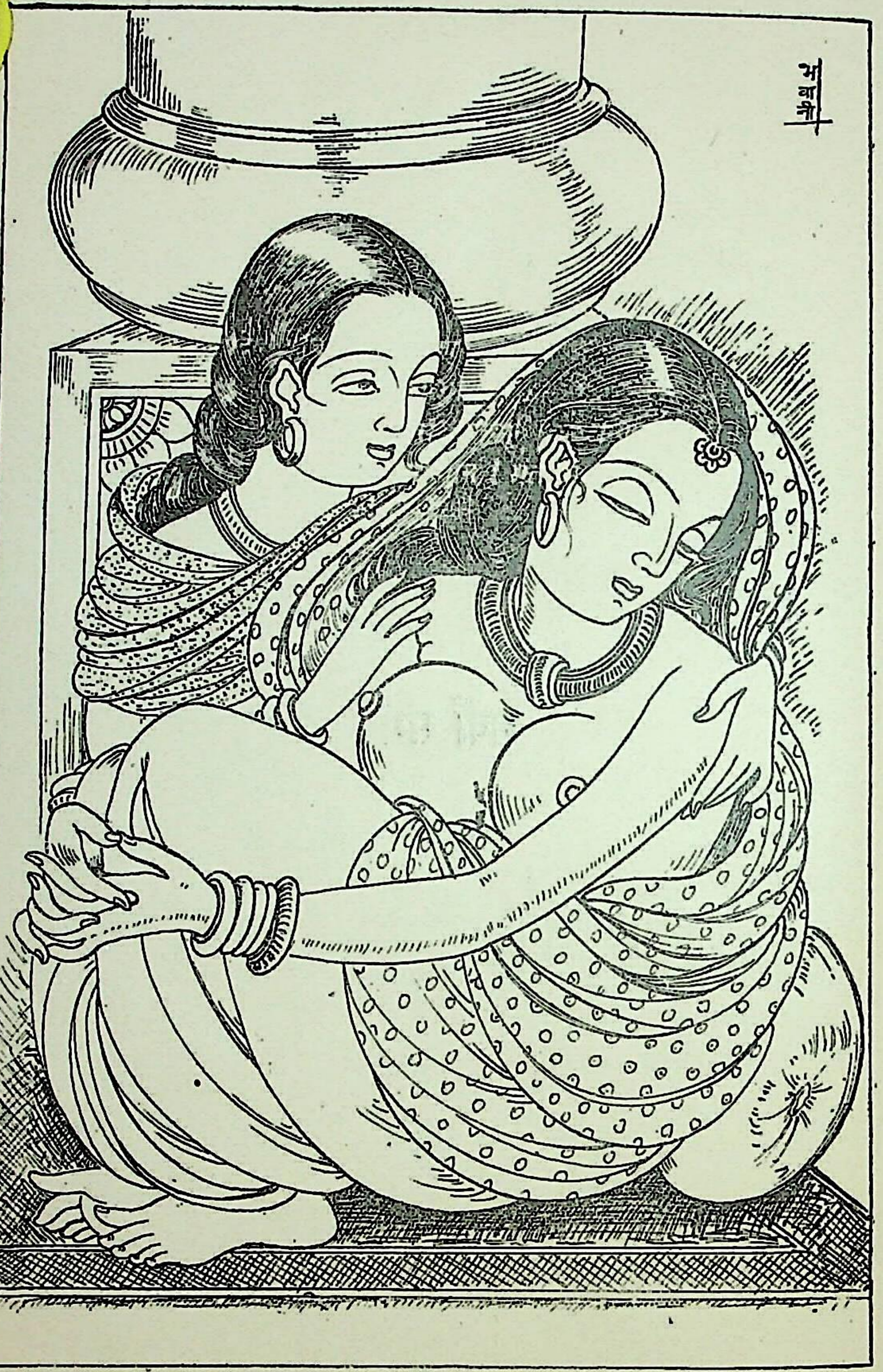

"मानिनि ! मत अब मान करो ।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सखी का राधा के प्रति

मन्मथखिन्ने ! रतिरसभिन्ने ! शोक-विपन्ने राधे !
हरि-चिन्तन-रत, सलिल नयन गत, बैठी हो चुप साधे !!
मानिनि ! मत अब मान करो ।

मन्द-मन्द मधु वायु विहरती
लायी उसको यहाँ, सिहरती—
बैठी जिसका ध्यान धरो।
मानिनि ! मत अब मान करो ॥

लज्जित ताल-फलों की गुरुता
कुच-कलशों की अनुपम रसता
रसमयि ! रस का दान करो।
मानिनि ! मत अब मान करो ॥

हरि-तन कलित ललित हियहारी।
भूलो मान; बनो बलिहारी।
बिनती इतनी कान धरो,
मानिनि ! मत अब मान करो ।

सिसक सिसक रोती हो विकले,
तरुण सखी हँसती हैं, तरले !
क्यों झूठा अभिमान करो ?
मानिनि ! मत अब मान करो ।

सजल कमल जल शीतल शयने—
प्रिय राजित हैं, कल चलनयने !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूरे सब अरमान करो।
मानिनि! मत अब मान करो॥

खेद-भार से बोझिल मन क्यों?
काँप रहा है मृदु तन क्यों यों?
जा बोलों से गान झरो।
मानिनि! मत अब मान करो॥

कवि जयदेव कथित यह वाणी,
रसिकजनों को हो सुखदानी,
रस परिपूरित प्राण करो।
मानिनि! मत अब मान करो॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दसवाँ सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"प्रिये ! चारुशीले ! तजो मान प्यारा।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लजती लखती सखी ओर औ' लेती श्वासें रीते
रोषमयी राधा से बोले प्रमुदित हरि दिन बीते—

(१)

"प्रिये ! चारुशीले ! तजो मान प्यारा,
अधर-पद्म-रस दे हरो ताप सारा।
तनिक बोल बोलो
खिले दंत-ज्योत्स्ना,
हरो घोर तम-भय
भरो प्राण-कोना।
सुधा सम अधर मधु
वदन चन्द्रमा से—
लगे लोल लोचन
चकोरक बने से।
प्रिये ! चारुशीले ! तजो मान प्यारा,
अधर पद्म-रस दे हरो ताप सारा।
अगर रोष है; खर—
नखर बाण छेदो,
भुजापाश बाँधो,
अधर दन्त भेदो।
सखी, प्राण, भूषण,
तुम्हीं रत्न भव की,
द्रवो आज रानी !
हरो आग हिय की।
प्रिये ! चारुशीले ! तजो मान प्यारा,
अधर पद्म-रस दे हरो ताप सारा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नलिन नेत्र नीले,
बने कोकनद से,
हुआ कृष्ण रंजित,
अगर बाण स्मर से,
तभी सिद्ध होगा,
नयन-रूप सुन्दर,
तभी सिद्ध होगा,
वदन-रूप सुन्दर।
प्रिये! चारुशीले! तजो मान प्यारा,
अधर पद्म-रस दे हरो ताप सारा।
कनक-कुम्भ पर हार,
धारो न अपना[1]
लसे आज जिससे,
हृदय-देश दुगुना;
सघन री जघन पर,
रशन मंजु डोले,
करे घोष 'किण-किण'
मदन-बोल-बोले।
प्रिये! चारुशीले! तजो मान प्यारा,
अधर पद्म-रस दे हरो ताप सारा।
चरण युग तुम्हारे,
कमल-मान गंजन,
रमण-राग कारी,
हृदय-भाग-रंजन,
लगा दूँ उन्हीं में
इन्हीं हाथ से सब
सजीला रसीला
महावर सजनि! अब।

१. धारो न···(मनुहारमयी भाषा में)=धारण करो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रिये ! चारुशीले ! तजो मान प्यारा,
अधरपद्म-रस दे हरो ताप सारा।

धरो पाद पल्लव,
मदन-ताप हर्ता,
इसी तप्त शिर पर,
हृदय शान्ति कर्ता।
चटुल चाटु पटु हरि,
भुला राधिका को—
सुलाते हृदय पर,
झुला साधिका को।

प्रिये ! चारुशीले ! तजो मान प्यारा,
अधर-पद्म-रस दे हरो ताप सारा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

घन उर जघन सतत आक्रांते ! स्वान्ते ! मम मन सूना,
तज शंका भुज में भर जाओ, हो हुलास हिय दूना।

× × ×

पंचबाण-चाण्डाल-बाण से प्राण न जायें मेरे,
निज अपराधी को रद से अब छेदो तुम्हीं सबेरे।[1]
और बाँध लो बाहुलता के बन्धन में अति मुझको,
दृढ़ कुच-पीड़ा दे हँस बोलो, 'बन्दी ! मुक्ति न तुझको।'

× × ×

बंकिम भौंहें नागिनि तेरी, डस लेतीं जब जन को,
अधर-सुधा ही विष हरता है–विरुज बनाता तन को।

× × ×

तन्वि ! मौन हो मार रहीं क्यों ? पंचम स्वर में बोलो,
तरल दीठ से देख हृदय के सारे बन्धन खोलो।
विमुख-भाव यह सुमुखि ! तुम्हारा अनुचित आज बड़ा है,
स्वयं स्निग्ध अतिशय तव प्रिय यह, मुग्धे ! सजल खड़ा है।

× × ×

अधर सुमन बन्धूक सरस सम; कल कपोल रस भीने—
फूल मधूक बन्धु से दर्शित, नेत्र नलिन-छवि लीने।
तिल-प्रसून-पदवी सी नासा, दन्त कुन्द सम भासे,
मुख-आश्रित पुष्पायुध तेरे जग-विजयी हो हासे।

× × ×

अवनी-अप्सरि ! अलस नेत्रमयि ! वदन-इन्दु तव शोभे,
गति मनहर, रति पटु, रम्भा-उरु ! चित्र लिखित भौं लोभे।

---

१. सबेरे=शीघ्र।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ग्यारहवाँ सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"चल सखि ! चल घनश्याम-सदन में।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१)

चिर अनुनय से हो अनुकूला धरकर सुन्दर वेश,
जाने को उद्यत है जो अब कुंज-शयन हरि-देश।
खेद-रहित आतुर राधा से दृगहर संध्या काले—
सखी एक हँस बोल उठी, "हे मृगनयनी ! ब्रजबाले !
"चल सखि, चल घनश्याम-सदन में—
मंजुल वंजुल कुंज-केलि थल,
देख थके हरि तुझको पल-पल;
कीं मनुहारें, गिरे चरण-तल;
भर लाये री नीर नयन में—
चल सखि ! चल घनश्याम-सदन में।
पीन पयोधर सघन जघन नव;
मणि-नूपुर का 'झन झन झन' -रव;
ले मंथर गति अति सखि ! अभिनव
हर हंसों की चाल चरण में—
चल सखि ! चल घनश्याम-सदन में।
मधु वाणी मोहन की सुन ले;
मोहित युवजन जिस पर; गुन ले;
कुसुम- शरासन-शासन-धुन ले—
कूक उठी कोकिल मधुवन में—
चल सखि ! चल घनश्याम-सदन में।
लतापुंज के पल्लव हिलकर;
बुला रहे ज्यों उठा सहज कर,
हे करभोरु ! गमन कर सत्वर,
मद छाया है मलय पवन में,
चल सखि ! चल घनश्याम-सदन में।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रिय-आलिंगन के आये क्षण;
मदन तरंगित कंपित मृदु तन,
पूछ कुचों से हार-धार जल—

ढरते जो वन कुम्भ शकुन में—
चल सखि! चल घनश्याम-सदन में।

ज्ञात सखी से लज्जित कैसे?
रति-रण-हित सज्जित है जिससे,
किंकिणि मिस बजती है जैसे,

भेरी स्मर की सकल भुवन में,
चल सखि! चल घनश्याम-सदन में!

स्मर-शर सम नख, कर निज सुन्दर—
दे हाथों में सखि के सत्वर,
खन खन वलय बजा शैया पर—

चल, हारे हरि शील-दमन में,
चल सखि! चल घनश्याम-सदन में।

श्री जयदेव कथित यह कविता कण्ठहार हो जन की,
रहे न इच्छा हार-हरण की—वामा-यौवन-धन की।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

स्थिरतम पुंजे वेतस कुंजे चिन्तातुर हरि राधे!
"वह देखेगी मुझे कहेगी स्मर-वाणी भुज बाँधे,
चाहेगी, क्रीड़ारत होगी"—कह यों भ्रम में भूले।
तुझे देखते कँपते-हँसते रोते गिर हिय-हूले।

× × ×

चल राधा! प्रिय ढिग उपवन में—
मंजु कुंजतल अति मनभावन,
विहँस विलस रति केलि-सदन में।
चल राधा! पिय-ढिग उपवन में।

नवल अशोक-दलों की मृदुतर,
शैया झलक रही है मनहर;
तरल हार धर विलस उरज पर—
विविध सुमन से सजे भवन में।
चल राधा! पिय-ढिग उपवन में।

मलय वायु यह 'सह सह' वहती,
हुलस मदन-शरभीते!—कहती;
बहुवल्ली पल्लव नव छादित,
विलस अरी चिर कुंज रमण में।
चल राधा! पिय-ढिग उपवन में।

गीत भ्रमर मद-माते गाते,
'सरस-भाव' जन-हृदय जगाते—
'विलसो'; भर आनन्द स्वरों में—
कूक रही कोकिल मधुवन में—
चल राधा! पिय-ढिग उपवन में।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

हुलस उठी राधा मधुवन में ।
अपना ही प्रतिबिम्ब देखकर अपने जीवन-धन में ।
चिर अभिलाष विलास-भरे हरि, डूबे हर्ष मदन में,
सिहर उठी राधा अति मन में,
हुलस उठी राधा मधुवन में ।

राधा-वदन-विलोकन से हैं विकसित विविध विकार,
जैसे विधु को जोह जलधि लहरों भर लाता ज्वार,
उर पर लहराता है हरि के अमल तार[1] का हार,
मानों फेन-कदम्ब-करम्बित जमुना-जल की धार,
हुलस उठी राधा मधुवन में ।
विलस उठी राधा अति मन में ॥

श्यामल कोमल वपु पर सज्जित सुन्दर गौर दुकूल;
पीत पराग पटल है राजित ज्यों नलिनी के फूल;
तरल दृगंचल चलन मनोहर वदन उदित रति-राग;
खेल रहे खंजन कंजोदर मानों शरद तड़ाग ।
हुलस उठी राधा मधुवन में ।
विलस उठी राधा अति मन में ॥

वदन कमल पर रवि से राजित युग कुण्डल अति सुन्दर;
हिल पल्लव से होंठ जताते चुम्बन-हित ज्यों आतुर ।
घन में इंदु किरण सम सज्जित सुन्दर कुसुमित केश,
तिमिरोदित विधु मण्डल मानों मलयज-तिलक-निवेश ।
हुलस उठी राधा मधुवन में ।
विलस उठी राधा अति मन में ॥

---

१. मोती ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विपुल पुलक भर ललक केलि रति दिखते अधिक अधीर,
मणि गण किरण समूह समुज्ज्वल भूषण सुभग शरीर,
श्रीजयदेव कथित हरि-वर्णन द्विगुणित भूषण भार;
हो हिय में अंकित जब जन के उदित पुण्य का सार।
हुलस उठी राधा मधुवन में।
विलस रही राधा उपवन में॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बारहवाँ सर्ग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"मानिनि ! अपना मान बिसारो ।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१)

स्मर-पूरित मन, लगी थिरकने दीठ "शयन" की ओर—
तरल स्मित भी लगी भिगाने मधुर अधर की कोर,
लज्जा से हो उठे लाल जब गोरे मृदुल कपोल—
सखी-गमन पर हरि राधा से बोल उठे दो बोल—
मानिनि ! अपना मान बिसारो ।
नव किसलय-शैया पर सुन्दरि ! पद-पद्मों को धारो ।
और अरुणिमा से पल्लव के 'अहंभाव' को मारो ।
दूर देश से थक आई हो, कर-कमलों से अपने—
पद सहलाकर श्रम हर लूँगा—(क्यों विहँसीं चलनयने ?)
दूँ उतार पायल, क्षण भर तो शैया पर ढिग मेरे—
बैठो प्रिय ! बतरस से हिय हो शीतल आज सबेरे ।
उर-दुकूल कर दूर कुचों की आलिंगन-आतुरता—
अन्त करो भुज-पाश समाकर देवि ! अखिल व्याकुलता ।
विरह-अनल से दग्ध देह यह नष्ट हुए सब सपने ।
अधर-सुधा-रस से जीवन दो इस अनुचर को अपने ॥
मधु किंकिणि-ध्वनि से पूरित हों युगल कान ये मेरे ।
पिक-रव से पीड़ित थे जो अति विरह-समय में तेरे ॥
लाज भरे ये नेत्र देखने खुलते हैं—झप जाते ।
मान निगोड़े के कारण हम, दो न एक हो पाते ।
माधव कर मनुहार प्रिया से रति-विलास-रस भूले ।
जन-रञ्जक मधुमय लीला गा कवि 'जय' मन में फूले !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"अनुहारमयी राधा ।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

उमग रही राधा तन-मन में
विलस रही मृदु सुमन-शयन में
अति क्रीड़ा—बाधित आलिङ्गन,
मन्द वार्ता—वारित चुम्बन
नयन नमित, वञ्चित मुख दर्शन
सुख अति, विस्मृत रति-लीला-गुन
उमग रही राधा तन-मन में।
विलस रही मृदु सुमन-शयन में।
बाहु-बद्ध, कुच से आपीड़ित
दशन-अधर-क्षत, श्रोणी[1]-ताड़ित
कर पंकज कल कच भ्रू व धारित
रति-गति वामा (जग अपवारित)
उमग रही राधा तन-मन में।
विलस रही मृदु सुमन-शयन में॥

१. नितम्ब।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

सरस सुरति के अन्त, अङ्ग से छिन्न खिन्न हो बाला—
हरि से बोल उठी आँखों में भर कर मद की हाला—
'हे यदुनन्दन! हृदयानन्दन! इतनी अनुनय मेरी—
पूर्ण करो हे असुरनिकन्दन! (लगा रहे क्यों देरी?)
चन्दन-शिशिर समान करों सें कुच कलशों पर मेरे,
मृगमद पत्रक सुन्दर! सहचर चित्रित करो सवेरे!
हे यदुनन्दन! हृदयानन्दन! इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर निकन्दन! लगा रहे क्यों देरी?
रति नायक सायकमोचन ये, लोचन आँजो फिर से,
चुम्बन-गलित हुआ कज्जल है, जिस पर भौंरे तरसे!
हे यदुनन्दन! हृदयानन्दन! इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर-निकन्दन! लगा रहे क्यों देरी?
मनसिज पाश विलास कुण्डलों को कानों में धारो,
हे शुभ अंग! तरंग नयन पर हरिण वृन्द को वारो'
हे यदुनन्दन! हृदयानन्दन! इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर-निकन्दन! लगा रहे क्यों देरी?
अमल कमल मुख पर पिय बिखरी ये अलकें सुलझाओ,
रह-रह झूम चूम उठते अलि, इनको दूर भगाओ!
हे यदुनन्दन! हृदयानन्दन! इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर निकन्दन! लगा रहे क्यों देरी?

---

१. सवेरे=शीघ्र। २. अलिक=ललाट।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मृग मद-रस से वलित ललित अति तिलक अलिक पर मेरे,
रचो, चन्द्र को, भास उठे ज्यों मृगछाया हो घेरे !
हे यदुनन्दन ! हृदयानन्दन ! इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर निकन्दन ! लगा रहे क्यों देरी ?
मोर पंख, चामर ध्वज मनसिज से सुन्दर अलकों से,
गिरे सुमन क्रीड़ा में, उनको गूँथो चुन पलकों से !
हे यदुनन्दन ! हृदयानन्दन ! इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर निकन्दन लगा रहे क्यों देरी ?
सरस जघन घन पर मणि रशना वसनाभरण फबीले,
पहनाओ सत्वर शुभ आशय ! (कँपते नयन लजीले !)
हे यदुनन्दन ! हृदयानन्दन इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर निकन्दन लगा रहे क्यों देरी ?
कलि की कलुष गरल मारक यह कवि श्री जय की वाणी,
हरि-चरणों के स्मरणामृत-सी बनती जग कल्याणी !
हे यदुनन्दन ! हृदयानन्दन ! इतनी अनुनय मेरी,
पूर्ण करो हे असुर-निकन्दन लगा रहे क्यों देरी ?

× × ×

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'कुच पर पत्र, चित्र गालों पर जघन करधनी; केशे,
सुमन सजाओ, राधा बोली—'हे पीताम्बर वेशे !''
कलय-वलय कर, पद मणि नूपुर पहनाओ हे मेरे !
हरि विहँसे कह—'प्रिये ! समर्पित हूँ चरणों में तेरे ?'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रथमः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सामोद दामोदर:

मेघैर्मेदुरमम्बरं वनभुवः श्यामास्तमालद्रुमै-
र्नक्तं भीरुरयं त्वमेव तदिमं राधे ! गृहं प्रापय ।
इत्थं नन्दनिदेशतश्चलितयोः प्रत्यध्वकुञ्जद्रुमं
राधामाधवयोर्जयन्ति यमुनाकूले रहः केलयः ॥१॥

वाग्देवताचरितचित्रितचित्तसद्मा
पद्मावतीचरणचारणचक्रवर्ती ।
श्रीवासुदेवरतिकेलिकथासमेत-
मेतं करोति जयदेवकविः प्रबन्धम् ॥२॥

यदि हरिस्मरणे सरसं मनो यदि विलासकलासु कुतूहलम् ।
मधुरकोमलकान्तपदावलीं शृणु तदा जयदेवसरस्वतीम् ॥३॥

वाचः पल्लवयत्युमापतिधरः संदर्भशुद्धिं गिरां
जानीते जयदेव एव शरणः श्लाघ्यो दुरूहद्रुतेः ।
शृङ्गारोत्तरसत्प्रमेयरचनैराचार्यगोवर्धन-
स्पर्धी कोऽपि न विश्रुतः श्रुतिधरोधोयी कविक्ष्मापतिः ॥४॥

मालवगौडरागेण रूपकतालेन गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१॥

प्रलयपयोधिजले धृतवानसि वेदम्
विहितवहित्रचरित्रमखेदम् ।
केशव धृतमीनशरीर
जय जगदीश हरे ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥

क्षितिरतिविपुलतरे तव तिष्ठति पृष्ठे
धरणिधरणकिणचक्रगरिष्ठे ।
केशव धृतकच्छपरूप
जय जगदीश हरे ॥२॥

वसति दशनशिखरे धरणी तव लग्ना
शशिनि कलङ्ककलेव निमग्ना ।
केशव धृतशूकररूप
जय जगदीश हरे ॥३॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तव करकमलवरे नखमद्भुतशृङ्गम्
दलितहिरण्यकशिपुतनुभृङ्गम् ।
केशव धृतनरहरिरूप
जय जगदीश हरे ॥४॥

छलयसि विक्रमणे बलिमद्भुतवामन
पदनखनीरजनितजनपावन ।
केशव धृतवामनरूप
जय जगदीश हरे ॥५॥

क्षत्रियरुधिरमये जगदपगतपापम्
स्नपयसि पयसि शमितभवतापम् ।
केशव धृतभृगुपतिरूप
जय जगदीश हरे ॥६॥

वितरसि दिक्षु रणे दिक्पतिकमनीयं
दशमुखमौलिबलिं रमणीयम् ।
केशव धृतरामशरीर
जय जगदीश हरे ॥७॥

वहसि वपुषि विशदे वसनं जलदाभम्
हलहतिभीतिमिलितयमुनाभम् ।
केशव धृतहलधररूप
जय जगदीश हरे ॥८॥

निन्दसि यज्ञविधेरहह श्रुतिजातम्
सदयहृदय दर्शितपशुघातम् ।
केवश धृतबुद्धिशरीर
जय जगदीश हरे ॥९॥

म्लेच्छनिवहनिधने कलयसि करवालं
धूमकेतुमिव किमपि करालम् ।
केशव धृतकल्किशरीर
जय जगदीश हरे ॥१०॥

श्रीजयदेवकवेरिदमुदितमुदारम्
शृणु सुखदं शुभदं भवसारम् ।
केशव धृतदशविधरूप
जय जगदीश हरे ॥११॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेदानुद्धरते जगन्निवहते भूगोलमुद्बिभ्रते
दैत्यं दारयते बलिं छलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते ।
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते
म्लेच्छान्मूर्च्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः ॥१२॥

गुर्जरीरागनिःसारतालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥२॥

श्रितकमलाकुचमण्डल, धृतकुण्डल ए ।
कलितललितवनमाल, जय जय देव हरे ॥ ध्रुवपदम् ॥ १ ॥

दिनमणिमण्डलमण्डन, भवखण्डन ए ।
मुनिजनमानसहंस, जय जय देव हरे ॥२॥

कालियविषधरगञ्जन, जनरञ्जन ए ।
यदुकुलनलिनदिनेश, जय जय देव हरे ॥ ३ ॥

मधुमुरनरकविनाशन, गरुड़ासन ए ।
सुरकुलकेलिनिदान, जय जय देव हरे ॥४॥

अमलकमलदललोचन, भवमोचन ए ।
त्रिभुवनभुवननिधान, जय जय देव हरे ॥५॥

जनकसुताकृतभूषण, जितदूषण ए ।
समरशमितदशकण्ठ, जय जय देव हरे ॥६॥

अभिनवजलधरसुन्दर, धृतमन्दर ए ।
श्रीमुखचन्द्रचकोर, जय जय देव हरे ॥७॥

तव चरणं प्रणता, वयमिति भावय ए ।
कुरु कुशलं प्रणतेषु, जय जय देव हरे ॥८॥

श्रीजयदेवकवेरिदं, कुरुते मुदम् ए ।
मङ्गलमुज्ज्वलगीतं, जय जय देव हरे ॥९॥

पद्मापयोधरतटीपरिरम्भलग्नकाश्मीरमुद्रितमुरो मधुसूदनस्य ।
व्यक्तानुरागमिव खेलदनङ्गखेदस्वेदाम्बुपूरमनुपूरयतु प्रयं वः ॥१०॥

वसन्ते वासन्तीकुसुमसुकुमारैरवयवै-
र्भ्रमन्तीं कान्तारे बहुविहितकृष्णानुसरणाम् ।
अमन्दं कन्दर्पज्वरजनितचिन्ताकुलतया,
चलद्बाधां राधां सरसमिदमूचे सहचरी ॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वसन्तरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥३॥

ललितलवङ्गलतापरिशीलनकोमलमलयसमीरे
मधुकरनिकरकरम्बितकोकिलकूजितकुञ्जकुटीरे ।
विहरति हरिरिह सरसवसन्ते
नृत्यति युवतिजनेन समं सखि विरहिजनस्य दुरन्ते ॥ ध्रुवपदम् ॥२॥

उन्मदमदनमनोरथपथिकवधूजनजनितविलापे ।
अलिकुलसंकुलकुसुमसमूहनिराकुलवकुलकलापे ॥ विह० ॥३॥

मृगमदसौरभरभसवशंवदनवदलमालतमाले ।
युवजनहृदयविदारणमनसिजनखरुचिकिंशुकजाले ॥विह० ॥४॥

मदनमहीपतिकनकदण्डरुचिकेशरकुसुमविकासे ।
मिलितशिलीमुखपाटलपटलकृतस्मरतूणविलासे ॥विह० ॥५॥

विगलितलज्जितजगदवलोकनतरुणकरुणकृतहासे ।
विरहिनिकृन्तनकुन्तमुखाकृतिकेतकदन्तुरिताशे ॥ विह० ॥६॥

माधविकापरिमलललिते नवमालिकयातिसुगन्धौ ।
मुनिमनसामपि मोहनकारिणि तरुणाकारणबन्धौ ॥ विह० ॥७॥

स्फुरदतिमुक्तलतापरिरम्भणमुकुलितपुलकितचूते ।
वृन्दावनविपिने परिसरपरिगतयमुनाजलपूते ॥ विह० ॥८॥

श्रीजयदेवभणितमिदमुदयति हरिचरणस्मृतिसारम् ।
सरसवसन्तसमयवनवर्णनमनुगतमदनविकारम् ॥ विह० ॥९॥

दरविदलितमल्लीवल्लिचञ्चत्पराग-
प्रकटितपटवासैर्वासयन्काननानि ।
इह हि दहति चेतः केतकीगन्धबन्धुः
प्रसरदसमबाणप्राणवद्गन्धवाहः ॥१०॥

उन्मीलन्मधुगन्धलुब्धमधुपव्याधूतचूताङ्कुर-
क्रीडत्कोकिलकाकलीकलरवैरुद्गीर्णकर्णज्वराः ।
नीयन्ते पथिकैः कथंकथमपि ध्यानावधानक्षण-
प्राप्तप्राणसमासमागमरसोल्लासैरमी वासराः ॥११॥

अनेकनारीपरिरम्भसंभ्रमस्फुरन्मनोहारिविलासलालसम् ।
मुरारिमारादुपदर्शयन्त्यसौ सखी समक्षं पुनराह राधिकाम् ॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रामकरीरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥४॥

चन्दनचर्चितनीलकलेवरपीतवसनवनमाली ।
केलिचलन्मणिकुण्डलमण्डितगण्डयुगस्मितशाली ॥२॥

हरिरिह मुग्धवधूनिकरे विलासिनि विलसति केलिपरे ॥ ध्रुव० ॥
पीनपयोधरभारभरेण हरिं परिरभ्य सरागम् ।
गोपवधूरनुगायति काचिदुदञ्चितपञ्चमरागम् ॥ हरि० ॥३॥

कापि विलासविलोलविलोचनखेलनजनितमनोजम् ।
ध्यायति मुग्धवधूरधिकं मधुसूदनवदनसरोजम् ॥ हरि० ॥४॥

कापि कपोलतले मिलिता लपितुं किमपि श्रुतिमूले ।
चारु चुचुम्ब नितम्बवती दयितं पुलकैरनुकूले ॥हरि० ॥५॥

केलिकलाकुतुकेन च काचिदमुं यमुनाजलकूले ।
मञ्जलवञ्जुलकुञ्जगतं विचकर्ष करेण दुकूले ॥ हरि० ॥६॥

करतलतालतरलवलयावलिकलितकलस्वनवंशे ।
रासरसे सहनृत्यपरा हरिणा युवतिः प्रशशंसे ॥ हरि० ॥७॥

श्लिष्यति कामपि चुम्बति कामपि कामपि रमयति रामाम् ।
पश्यति स स्मितचारुतरामपरामनुगच्छति वामाम् ॥ हरि० ॥८॥

श्रीजयदेवभणितमिदमद्भुतकेशवकेलिरहस्यम् ।
वृन्दावनविपिने ललितं वितनोतु शुभानि यशस्यम् ॥हरि० ॥९॥

विश्वेषामनुरञ्जनेन जनयन्नानन्दमिन्दीवर-
श्रेणीश्यामलकोमलैरुपनयन्नङ्गैरनङ्गोत्सवम् ।
स्वच्छन्दं व्रजसुन्दरीभिरभितः प्रत्यङ्गमालिङ्गितः
शृङ्गारः सखि ! मूर्तिमानिव मधौ मुग्धो हरिः क्रीडति ॥१०॥

नित्योत्सङ्गवसद्भुजङ्गकवलक्लेशादिवेशाचलं
प्रालेयप्लवनेच्छयानुसरति श्रीखण्डशैलानिलः ।
किं च स्निग्धरसालमौलिमुकुलान्यालोक्य हर्षोदया-
दुन्मीलन्ति कुहूः कुहूरिति कलोत्तालाः पिकानां गिरः ॥११॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रासोल्लासभरेण विभ्रमभृतामाभीरवामभ्रुवा-
मभ्यर्णं परिरभ्य निर्भरमुरः प्रेमान्धया राधया ।
साधु त्वद्वदनं सुधामयमिति व्याहृत्य गीतस्तुति-
व्याजादुद्भटचुम्बितः स्मितमनोहारी हरिः पातु वः ॥१२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वितीयः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अक्लेश केशवः

विहरति वने राधा साधारणप्रणये हरौ
विगलितनिजोत्कर्षादीर्ष्यावशेन गताऽन्यतः ।
क्वचिदपि लताकुञ्जे गुञ्जन्मधुव्रतमण्डली-
मुखरशिखरे लीना दीनाप्युवाच रहः सखीम् ॥१॥

गुर्जरीरागेण यतितालेन गीयते ॥ प्रबन्धः ॥५॥

संचरदधरसुधामधुरध्वनिमुखरितमोहनवंशम् ।
चलितदृगञ्चलचञ्चलमौलिकपोलविलोलवतंसम् ।
रासे हरिमिह विहितविलासम्
स्मरति मनो मम कृतपरिहासम् ॥ ध्रुवपदम् ॥२॥

चन्द्रकचारुमयूरशिखण्डकमण्डलवलयितकेशम् ।
प्रचुरपुरन्दरधनुरनुरञ्जितमेदुरमुदिरसुवेशम् ॥ रासे० ॥३॥

गोपकदम्बनितम्बवतीमुखचुम्बनलम्भितलोभम् ।
बन्धुजीवमधुराधरपल्लवमुल्लसितस्मितशोभम् ॥ रासे० ॥४॥

विपुलपुलकभुजपल्लववलयितवल्लवयुवतिसहस्रम् ।
करचरणोरसि मणिगणभूषणकिरणविभिन्नतमिस्रम् ॥ रासे० ॥५॥

जलदपटलचलदिन्दुविनिन्दकचन्दनतिलकललाटम् ।
पीनपयोधरपरिसरमर्दननिर्दयहृदयकपाटम् ॥ रासे० ॥६॥

मणिमयमकरमनोहरकुण्डलमण्डितगण्डमुदारम् ।
पीतवसनमनुगतमुनिमनुजसुरासुरवरपरिवारम् ॥ रासे० ॥७॥

विशदकदम्बतले मिलितं कलिकलुषभयं शमयन्तम् ।
मामपि किमपि तरलतरङ्गदनङ्गदृशा मनसा रमयन्तम् ॥ रासे० ॥८॥

श्रीजयदेवभणितमतिसुन्दरमोहनमधुरिपुरूपम् ।
हरिचरणस्मरणं प्रति संप्रति पुण्यवतामनुरूपम् ॥ रासे० ॥९॥

गणयति गुणग्रामं भ्रामं भ्रमादपि नेहते
वहति च परितोषं दोषं विमुञ्चति दूरतः ।
युवतिषु वलत्तृष्णे कृष्णे विहारिणि मां विना
पुनरपि मनो वामं कामं करोति करोमि किम् ॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मालवगौडरागेण एकतालीतालेन च गीयते ॥ प्रबन्धः ॥६॥

निभृतनिकुञ्जगृहं गतया निशि रहसि निलीय वसन्तम् ।
चकितविलोकितसकलदिशा रतिरभसभरेण हसन्तम् ।
सखि ! हे केशीमथनमुदारम्
रमय मया सह मदनमनोरथभावितया सविकारम् ॥ ध्रुवपदम् ॥२॥
प्रथमसमागमलज्जितया पटुचाटुशतैरनुकूलम् ।
मृदुमधुरस्मितभाषितया शिथिलीकृतजघनदुकूलम् ॥ सखि० ॥३॥
किसलयशयननिवेशितया चिरमुरसि ममैव शयानम् ।
कृतपरिरम्भणचुम्बनया परिरभ्य कृताधरपानम् ॥ सखि० ॥४॥
अलसनिमीलितलोचनया पुलकावलिललितकपोलम् ।
श्रमजलसकलकलेवरया वरमदनमदादतिलोलम् ॥ सखि० ॥५॥
कोकिलकलरवकूजितया जितमनसिजतन्त्रविचारम् ।
श्लथकुसुमाकुलकुन्तलया नखलिखितघनस्तनभारम् ॥ सखि० ॥६॥
चरणरणितमणिनूपुरया परिपूरितसुरतवितानम् ।
मुखरविशृङ्खलमेखलया सकचग्रहचुम्बनदानम् ॥ सखि० ॥७॥
रतिसुखसमयरसालसया दरमुकुलितनयनसरोजम् ।
निःसहनिपतिततनुलतया मधुसूदनमुदितमनोजम् ॥ सखि० ॥८॥
श्रीजयदेवभणितमिदमतिशयमधुरिपुनिधुवनशीलम् ।
सुखमुत्कण्ठितगोपवधूकथितं वितनोतु सलीलम् ॥ सखि० ॥९॥

हस्तस्रस्तविलासवंशमनृजुभ्रूवल्लिमद्बल्लवी-
वृन्दोत्सारिदृगन्तवीक्षितमतिस्वेदार्द्रगण्डस्थलम् ।
मामुद्वीक्ष्य विलज्जितं स्मितसुधामुग्धाननं कानने
गोविन्दं व्रजसुन्दरीगणवृतं पश्यामि हृष्यामि च ॥१०॥

दुरालोकस्तोकस्तबकनवकाशोकलतिका-
विकासः कासारोपवनपवनोऽपि व्यथयति ।
अपि भ्राम्यद्भृङ्गीरणितरमणीया न मुकुल-
प्रसूतिश्चूतानां सखि शिखरिणीयं सुखयति ॥११॥

साकूतस्मितमाकुलाकुलगलद्धम्मिल्लमुल्लासित-
भ्रूवल्लीकमलीकदर्शितभुजामूलोर्ध्वहस्तस्तनम्
गोपीनां निभृतं निरीक्ष्य गमिताकांक्षश्चिरं चिन्तय-
न्नन्तर्मुग्धमनोहरं हरतु वः क्लेशं नवः केशवः ॥१२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तृतीयः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुग्ध मधुसूदनः

कंसारिरपि संसारवासनाबन्धशृङ्खलाम् ।
राधामाधाय हृदये तत्याज व्रजसुन्दरीः ॥१॥

इतस्ततस्तामनुसृत्य राधिकामनङ्गबाणव्रणखिन्नमानसः ।
कृतानुतापः स कलिन्दनन्दिनीतटान्तकुञ्जे विषसाद माधवः ॥२॥

गुर्जरीरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥७॥

सामियं चलिता विलोक्य वृतं वधूनिचयेन ।
सापराधतया मयापि न वारिताऽतिभयेन ।
हरि हरि हतादरतया गता सा कुपितेव ॥ ध्रुवपदम् ॥३॥

किं करिष्यति किं वदिष्यति सा चिरं विरहेण ।
किं धनेन जनेन किं मम जीवितेन गृहेण ॥ हरि हरि० ॥४॥

चिन्तयामि तदाननं कुटिलभ्रु कोपभरेण ।
शोणपद्ममिवोपरिभ्रमताकुलं भ्रमरेण ॥ हरि हरि० ॥५॥

तामहं हृदि संगतामनिशं भृशं रमयामि ।
किं वनेऽनुसरामि तामिह किं वृथा विलपामि ॥ हरि हरि० ॥६॥

तन्वि ! खिन्नमसूयया हृदयं तवाकलयामि ।
तन्न वेद्मि कुतो गतासि न तेन तेऽनुनयामि ॥ हरि हरि० ॥७॥

दृश्यसे पुरतो गतागतमेव मे विदधासि ।
किं पुरेव ससंभ्रमं परिरम्भणं न ददासि ? ॥ हरि हरि० ॥८॥

क्षम्यतामपरं कदापि तवेदृशं न करोमि ।
देहि सुन्दरि ! दर्शनं मम मन्मथेन दुनोमि ॥ हरि हरि० ॥९॥

वर्णितं जयदेवकेन हरेरिदं प्रवणेन ।
किन्दुविल्वसमुद्रसंभवरोहिणीरमणेन ॥ हरि हरि० ॥१०॥

हृदि बिसलताहारो नायं भुजङ्गमनायकः
कुवलयदलश्रेणी कण्ठे न सा गरलद्युतिः ।
मलयजरजो नेदं भस्म प्रियारहिते मयि
प्रहर न हरभ्रान्त्याऽनङ्ग ! क्रुधा किमु धावसि ? ॥११॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाणौ मा कुरु चूतसायकममुं मा चापमारोपय
क्रीडानिर्जितविश्व ! मूर्च्छितजनाघातेन किं पौरुषम् ।
तस्या एव मृगीदृशो मनसिज ! प्रेङ्खत्कटाक्षाशुग-
श्रेणीज रितं मनागपि मनो नाद्यापि संधुक्षते ॥१२॥

भ्रूपल्लवं धनुरपाङ्गतरङ्गितानि
बाणा गुणः श्रवणपालिरिति स्मरेण ।
तस्यामनङ्गजयजङ्गमदेवताया-
मस्त्राणि निर्जितजगन्ति किमर्पितानि ॥१३॥

भ्रूचापे निहितः कटाक्षविशिखो निर्मातु मर्मव्यथां
श्यामात्मा कुटिलः करोतु कबरीभारोऽपि मारोद्यमम् ।
मोहं तावदयं च तन्वि ! तनुतां बिम्बाधरो रागवान्
सद्वृत्तः स्तनमण्डलस्तव कथं प्राणैर्मम क्रीडति ? ॥१४॥

तानि स्पर्शसुखानि ते च तरलाः स्निग्धा दृशोर्विभ्रमा-
स्तद्वक्त्राम्बुजसौरभं स च सुधास्यन्दी गिरां वक्रिमा ।
सा बिम्बाधरमाधुरीति विषयासङ्गेऽपि चेन्मानसं
तस्यां लग्नसमाधि, हन्त विरहव्याधिः कथं वर्धते ॥१५॥

तिर्यक्कण्ठविलोलमौलितरलोत्तंसस्य वंशोच्चर-
द्दीप्तिस्थानकृतावधानललनालक्षैर्न संलक्षिताः ।
संमुग्धे मधुसूदनस्य मधुरे राधामुखेन्दौ सुधा-
सारे कन्दलिताश्चिरं ददतु वः क्षेमं कटाक्षोर्मयः ॥१६॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चतुर्थः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्निग्ध मधुसूदनः

यमुनातीरवानीरनिकुञ्जे मन्दमास्थितम् ।
प्राह प्रेमभरोद्भ्रान्तं माधवं राधिकासखी ॥१॥

कर्णाटरागैकतालीतालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥८॥

निन्दति चन्दनमिन्दुकिरणमनु विन्दति खेदमधीरम् ।
व्यालनिलयमिलनेन गरलमिव कलयति मलयसमीरम् ।
माधव ! मनसिजविशिखभयादिव भावनया त्वयि लीना ।
सा विरहे तव दीना ॥ ध्रुवपदम् ॥२॥
अविरलनिपतितमदनशरादिव भवदवनाय विशालम् ।
स्वहृदयमर्मणि वर्म करोति सजलनलिनीदलजालम् ॥ सा वि० ॥३॥
कुसुमविशिखशरतल्पमनल्पविलासकलाकमनीयम् ।
व्रतमिव तव परिरम्भसुखाय करोति कुसुमशयनीयम् ॥ सा वि० ॥४॥
वहति च चलितविलोचनजलभरमाननकमलमुदारम् ।
विधुमिव विकटविधुन्तुददन्तदलनगलितामृतधारम ॥ सा वि० ॥५॥
विलिखति रहसि कुरङ्गमदेन भवन्तमसमशरभूतम् ।
प्रणमति मकरमधो विनिधाय करे च शरं नवचूतम् ॥ सा वि० ॥६॥
ध्यानलयेन पुरः परिकल्प्य भवन्तमतीव दुरापम् ।
विलपति हसति विषीदति रोदिति चञ्चति मुञ्चति तापम् ॥ सा वि० ॥७॥
प्रतिपदमिदमपि निगदति माधव ! तव चरणे पतिताहम् ।
त्वयि विमुखे मयि सपदि सुधानिधिरपि तनुते तनुदाहम् ॥ सा वि० ॥८॥
श्रीजयदेवभणितमिदमधिकं यदि मनसा नटनीयम् ।
हरिविरहाकुलबल्लवयुवतिसखीवचनं पठनीयम् ॥ सा वि० ॥९॥

आवासो विपिनायते प्रियसखीमालापि जालायते
तापोऽपि श्वसितेन दावदहनज्वालाकलापायते ।
सापि त्वद्विरहेण हन्त हरिणीरूपायते हा कथं
कन्दर्पोऽपि यमायते विरचयञ्शार्दूलविक्रीडितम् ॥१०॥

देशाखरागैकतालीतालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥९॥

स्तनविनिहितमपि हारमुदारम् ।
सा मनुते कृशतनुरिव भारम् ।
राधिका तव विरहे केशव ! ॥ध्रुवपदम् ॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सरसमसृणमपि मलयजपङ्कम् ।
पश्यति विषमिव वपुषि सशङ्कम् ॥ राधिका० ॥२॥
श्वसितपवनमनुपमपरिणाहम् ।
मदनदहनमिव वहति सदाहम् ॥ राधिका० ॥३॥
दिशि दिशि किरति सजलकणजालम् ।
नयननलिनमिव विगलितनालम् ॥ राधिका० ॥४॥
त्यजति न पाणितलेन कपोलम् ।
बालशशिनमिव सायमलोलम् ॥ राधिका० ॥५॥
नयनविषयमपि किसलयतल्पम् ।
कलयति विहितहुताशविकल्पम् ॥ राधिका० ॥६॥
हरिरिति हरिरिति जपति सकामम् ।
विरहविहितमरणेव निकामम् ॥ राधिका० ॥७॥
श्रीजयदेवभणितमिति गीतम् ।
सुखयतु केशवपदमुपनीतम् ॥ राधिका० ॥८॥
सा रोमाञ्चति सीत्करोति विलपत्युत्कम्पते ताम्यति
ध्यायत्युद्भ्रमति प्रमीलति पतत्युद्याति मूर्च्छत्यपि ।
एतावत्यतनुज्वरे वरतनुर्जीवेन्न किं ते रसा-
त्स्ववैद्यप्रतिम ! प्रसीदसि यदित्यक्तोऽन्यथा हस्तकः ॥९॥
स्मरातुरां दैवतवैद्यहृद्य ! त्वदङ्गसङ्गामृतमात्रसाध्याम् ।
निवृत्तबाधां कुरुषे न राधामुपेन्द्र ! वज्रादपि दारुणोऽसि ॥१०॥
कन्दर्पज्वरसंज्वरातुरतनोराश्चर्यमस्याश्चिरं
चेतश्चन्दनचन्द्रमःकमलिनीचिन्तासु संताम्यति ।
किंतु क्लान्तिवशेन शीतलतनुं त्वामेकमेव प्रियं
ध्यायन्ती रहसि स्थिता कथमपि क्षीणा क्षणं प्राणिति ॥११॥
क्षणमपि विरहः पुरा न सेहे
नयननिमीलनखिन्नया यया ते ।
श्वसिति कथमसौ रसालशाखां
चिरविरहेण विलोक्य पुष्पिताग्राम् ॥१२॥
वृष्टिव्याकुलगोकुलावनरसादुद्धृत्य गोवर्धनं
बिभ्रद्वल्लववल्लभाभिरधिकानन्दाच्चिरं चुम्बितः ।
दर्पेणैव तदर्पिताधरतटीसिन्दूरमुद्राङ्कितो
बाहुर्गोपतनस्तनोतु भवतां श्रेयांसि कंसद्विषः ॥१३॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पंचमः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रीकाक्षः

अहमिह निवसामि याहि राधा-
मनुनय मद्वचनेन चानयेथाः ।
इति मधुरिपुणा सखी नियुक्ता
स्वयमिदमेत्य पुनर्जगाद राधाम् ॥१॥

देशीवराडीरागेण रूपकतालेन गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१०॥

वहति मलयसमीरे मदनमुपनिधाय ।
स्फुटति कुसुमनिकरे विरहिहृदयदलनाय ॥१॥
तव विरहे वनमाली सखि ! सीदति ॥ ध्रुवपदम् ॥
दहति शिशिरमयूखे मरणमनुकरोति ।
पतति मदनविशिखे विलपति विकलतरोऽति ॥ तव वि० ॥२॥
ध्वनति मधुपसमूहे श्रवणमपिदधाति ।
मनसि कलितविरहे निशि निशि रुजमुपयाति ॥ तव वि० ॥३॥
वसति विपिनविताने त्यजति ललितधाम ।
लुठति धरणिशयने बहु विलपति तव नाम ॥ तव वि० ॥४॥
भणति कविजयदेवे विरहविलसितेन ।
मनसि रभसविभवे हरिरुदयतु सुकृतेन ॥ तव वि० ॥५॥
पूर्वं यत्र समं त्वया रतिपतेरासादिताः सिद्धय-
स्तस्मिन्नेव निकुञ्जमन्मथमहातीर्थे पुनर्माधवः ।
ध्यायंस्त्वामनिशं जपन्नपि तवैवालापमन्त्रावलीं
भूयस्त्वत्कुचकुम्भनिर्भरपरीरम्भामृतं वाञ्छति ॥२॥

गुर्जरीरागेण एकतालीतालेन गीयते ॥ प्रबन्धः ॥११॥

रतिसुखसारे गतमभिसारे मदनमनोहरवेषम् ।
न कुरु नितम्बिनि ! गमनविलम्बनमनुसर तं हृदयेशम् ॥१॥
धीरसमीरे यमुनातीरे वसति वने वनमाली ।
गोपीपीनपयोधरमर्दनचञ्चलकरयुगशाली ॥ ध्रुवपदम् ॥
नामसमेतं कृतसङ्केतं वादयते मृदुवेणुम् ।
बहु मनुतेऽतनु ते तनुसङ्गतपवनचलितमपि रेणुम् ॥ धीर० ॥२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पतति पतत्रे विचलति पत्रे शङ्कितभवदुपयानम्
रचयति शयनं सचकितनयनं पश्यति तव पन्थानम् ॥ धीर० ॥३॥
मुखरमधीरं त्यज मञ्जीरं रिपुमिव केलिसुलोलम् ।
चल सखि कुञ्जं सतिमिरपुञ्जं शीलय नीलनिचोलम् ॥ धीर० ॥४॥
उरसि मुरारेरुपहितहारे घन इव तरलबलाके ।
तडिदिव पीते ! रतिविपरीते राजसि सुकृतविपाके ॥ धीर० ॥५॥
विगलितवसनं परिहृतरसनं घटय जघनमपिधानम् ।
किसलयशयने पङ्कजनयने निधिमिव हर्षनिदानम् ॥ धीर० ॥६॥
हरिरभिमानी रजनिरिदानीमियमपि याति विरामम् ।
कुरु मम वचनं सत्वररचनं पूरय मधुरिपुकामम् ॥ धीर० ॥७॥

विकिरति मुहुः श्वासानाशाः पुरो मुहुरीक्षते
प्रविशति मुहुः कुञ्जं गुञ्जन्मुहुर्बहु ताम्यति ।
रचयति मुहुः शय्यां पर्याकुलं मुहुरीक्षते
मदनकदनक्लान्तः कान्ते ! प्रियस्तव वर्तते ॥३॥

त्वद्वाम्येन समं समग्रमधुना तिग्मांशुरस्तं गतो
गोविन्दस्य मनोरथेन च समं प्राप्तं तमः सान्द्रताम् ।
कोकानां करुणस्वनेन सदृशी दीर्घा मदभ्यर्थना
तन्मुग्धे ! विफलं विलम्बनमसौ रम्योऽभिसारक्षणः ॥४॥

आश्लेषादनु चुम्बनादनु नखोल्लेखादनु स्वान्तज-
प्रोद्बोधादनु संभ्रमादनु रतारम्भादनु प्रीतयोः ।
अन्यार्थं गतयोर्भ्रमान्मिलितयोः संभाषणैर्जानतो-
र्दम्पत्योरिह को न को न तमसि व्रीडाविमिश्रो रसः ॥५॥

सभयचकितं विन्यस्यन्तीं दृशं तिमिरे पथि
प्रतितरु मुहुः स्थित्वा मन्दं पदानि वितन्वतीम् ।
कथमपि रहःप्राप्तामङ्गैरनङ्गतरङ्गिभिः
सुमुखि ! सुभगः पश्यन्स त्वामुपैतु कृतार्थताम् ॥६॥

राधामुग्धमुखारविन्दमधुपस्त्रैलोक्यमौलिस्थली-
नेपथ्योचितनीलरत्नमवनीभारावतारान्तकः ।
स्वच्छन्दं व्रजसुन्दरीजनमनस्तोषप्रदोषोदयः
कंसध्वंसनधूमकेतुरवतु त्वां देवकीनन्दनः ॥७॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

षष्ठः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ तां गन्तुमशक्तां चिरमनुरक्तां लतागृहे दृष्ट्वा ।
तच्चरितं गोविन्दे मनसिजमन्दे सखी प्राह ॥१॥

गुणकरीरागेण रूपकतालेन गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१२॥

पश्यति दिशि-दिशि रहसि भवन्तम् ।
तदधरमधुरमधूनि पिबन्तम् ॥
नाथ हरे ! सीदति राधाऽऽवासगृहे ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥
त्वदभिसरणरभसेन वलन्ती ।
पतति पदानि कियन्ति चलन्ती ॥ नाथ हरे० ॥२॥
विहितविशदबिसकिसलयवलया ।
जीवति परमिह तव रतिकलया ॥ नाथ हरे० ॥३॥
मुहुरवलोकितमण्डनलीला ।
मधुरिपुरहमिति भावनशीला ॥ नाथ हरे० ॥४॥
त्वरितमुपैति न कथमभिसारम् ।
हरिरिति वदति सखीमनुवारम् ॥ नाथ हरे० ॥५॥
श्लिष्यति चुम्बति जलधरकल्पम् ।
हरिरुपगत इति तिमिरमनल्पम् ॥ नाथ हरे० ॥
भवति विलम्बिनि विगलितलज्जा ।
विलपति रोदिति वासकसज्जा ॥ नाथ हरे० ॥७॥
श्रीजयदेवकवेरिदमुदितम् ।
रसिकजनं तनुतामतिमुदितम् ॥ नाथ हरे० ॥८॥

विपुलपुलकपालिः स्फीतसीत्कारमन्त-
र्जनितजडिम काकुव्याकुलं व्याहरन्ती ।
तव कितव ! विधायामन्दकन्दर्पचिन्तां
रसजलनिधिमग्ना ध्यानलग्ना मृगाक्षी ॥१॥

अङ्गेष्वाभरणं करोति बहुशः पत्रेऽपि संचारिणि
प्राप्तं त्वां परिशङ्कते वितनुते शय्यां चिरं ध्यायति ।
इत्याकल्पविकल्पतल्परचनासङ्कल्पलीलाशत-
व्यासक्तापि विना त्वया वरतनुर्नैषा निशां नेष्यति ॥२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किं विश्राम्यसि कृष्णभोगिभवने भाण्डीरभूमीरुहि
भ्रातर्यासि न दृष्टिगोचरमितः सानन्दनन्दास्पदम् ।
राधाया वचनं तदध्वगमुखान्नन्दान्तिके गोपतो
गोविन्दस्य जयन्ति सायमतिथिप्राशस्त्यगर्भा गिरः ॥३॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सप्तमः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नागारनरायणः

अत्रान्तरे च कुलटाकुलवर्त्मघात-
संजातपातक इव स्फुटलाञ्छनश्रीः ।
वृन्दावनान्तरमदीपयदंशुजालै-
र्दिक्सुन्दरीवदनचन्दनबिन्दुरिन्दुः ॥१॥

प्रसरति शशधरबिम्बे विहितविलम्बे च माधवे विधुरा ।
विरचितविविधविलापं सा परितापं चकारोच्चैः ॥२॥

मालवरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१३॥

कथितसमयेऽपि हरिरहह न ययौ वनं
मम विफलमिदममलरूपमपि यौवनम् ।
यामि हे कमिह शरणं सखीजनवचनवञ्चिता ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥
यदनुगमनाय निशि गहनमपि शीलितं
तेन मम हृदयमिदमसमशरकीलितम् ॥ यामि हे० ॥२॥
मम मरणमेव वरमिति वितथकेतना ।
किमिति विषहामि विरहानलमचेतना ॥ यामि० हे० ॥३॥
मामहह विधुरयति मधुरमधुयामिनी ।
कापि हरिमनुभवति कृतसुकृतकामिनी ॥ यामि हे० ॥४॥
अहह कलयामि वलयादिमणिभूषणम् ।
हरिविरहदहनवहनेन बहुदूषणम् ॥ यामि हे० ॥५॥
कुसुमसुकुमारतनुमतनुशरलीलया ।
स्रगपि हृदि हन्ति मामतिविषमशीलया ॥ यामि हे० ॥६॥
अहमिह निवसामि नगणितवनवेतसा ।
स्मरति मधुसूदनो मामपि न चेतसा ॥ यामि हे० ॥७॥
हरिचरणशरणजयदेवकविभारती ।
वसतु हृदि युवतिरिव कोमलकलावती ॥ यामि हे० ॥८॥

तत्किं कामपि कामिनीमभिसृतः किं वा कलाकेलिभि-
र्बद्धो बन्धुभिरन्धकारिणी वनाभ्यर्णे किमुद्भ्राम्यति ।
कान्तः क्लान्तमना मनागपि पथि प्रस्थातुमेवाक्षमः
सङ्केतीकृतमञ्जुवञ्जुललताकुञ्जेऽपि यन्नागतः ॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथागतां माधवमन्तरेण सखीमियं वीक्ष्य विषादमूकाम् ।
विशङ्कमाना रमितं कयापि जनार्दनं दृष्टवदेतदाह ॥२॥

वसन्तरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१४॥

स्मरसमरोचितविरचितवेशा
गलितकुसुमदरविलुलितकेशा
कापि मधुरिपुणा विलसति युवतिरधिकगुणा ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥
हरिपरिरम्भणवलितविकारा ।
कुचकलशोपरि तरलितहारा ॥ कापि० ॥२॥
विचलदलकललिताननचन्द्रा ।
तदधरपानरभसकृततन्द्रा ॥ कापि० ॥३॥
चञ्चलकुण्डलदलितकपोला ।
मुखरितरसनजघनगतिलोला ॥ कापि० ॥४॥
दयितविलोकितलज्जितहसिता ।
बहुविधकूजितरतिरसरसिता ॥ कापि० ॥५॥
विपुलपुलकपृथुवेपथुभङ्गा ।
श्वसितनिमीलितविकसदनङ्गा ॥ कापि० ॥६॥
श्रमजलकणभरसुभगशरीरा ।
परिपतितोरसि रतिरणधीरा ॥ कापि० ॥७॥
श्रीजयदेवभणितहरिरमितम् ।
कलिकलुषं जनयतु परिशमितम् ॥ कापि० ॥८॥
विरहपाण्डुमुरारिमुखाम्बुजद्युतिरयं तिरयन्नपि वेदनाम् ।
विधुरतीव तनोति मनोभुवः सुहृदये हृदये मदनव्यथाम् ॥९॥

गुर्जरीरागैकतालीतालेन गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१५॥

समुदितमदने रमणीवदने चुम्बनवलिताधरे ।
मृगमदतिलकं लिखति सपुलकं मृगमिव रजनीकरे ॥
रमते यमुनापुलिनवने विजयी मुरारिरधुना ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥
घनचयरुचिरे रचयति चिकुरे तरलिततरुणानने ।
कुरवककुसुमं चपलासुषमं रतिपतिमृगकानने ॥ रमते० ॥२॥
घटयति सुघने कुचयुगगगने मृगमदरुचिरूषिते ।
मणिसरममलं तारकपटलं नखपदशशिभूषिते ॥ रमते० ॥३॥
जितबिसशकले मृदुभुजयुगले करतलनलिनीदले ।
मरकतवलयं मधुकरनिचयं वितरति हिमशीतले ॥ रमते० ॥४॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रतिगृहजघने विपुलापघने मनसिजकनकासने ।
मणिमयरसनं तोरणहसनं विकिरति कृतवासने ॥ रमते० ॥५॥
चरणकिसलये कमलानिलये नखमणिगणपूजिते ।
बहिरपवरणं यावकभरणं जनयति हृदि योजिते ॥ रमते० ॥६॥
रमयति सुभृशं कामपि सुदृशं खलहलधरसोदरे ।
किमफलमवसं चिरमिह विरसं वद सखि ! विटपोदरे ॥ रमते० ॥७॥
इह रसभणने कृतहरिगुणने मधुरिपुपदसेवके ।
कलियुगरचितं न वसतु दुरितं कविनृपजयदेवके ॥ रमते० ॥८॥

नायातः सखि ! निर्दयो यदि शठस्त्वं दूति ! किं दूयसे ?
स्वच्छन्दं बहुवल्लभः स रमते, किं तत्र ते दूषणम् ?
पश्याद्य प्रियसंगमाय दयितस्याकृष्यमाणं गुणै-
रुत्कण्ठार्तिभरादिव स्फुटदिदं चेतः स्वयं यास्यति ॥९॥

देशवराडीरागेण रूपकतालेन गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१६॥

अनिलतरलकुवलयनयनेन ।
तपति न सा किसलयशयनेन ।
सखि ! या रमिता वनमालिना ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥
विकसितसरसिजललितमुखेन ।
स्फुटति न सा मनसिजविशिखेन ॥ सखि ! या० ॥२॥
अमृतमधुरमृदुतरवचनेन ।
ज्वलति न सा मलयजपवनेन ॥ सखि० ! या० ॥३॥
स्थलजलरुहरुचिकरचरणेन ।
लुठति न सा हिमकरकिरणेन ॥ सखि ! या ॥४॥
सजलजलदसमुदयरुचिरेण ।
दलति न सा हृदि चिरविरहेण ॥ सखि ! या० ॥५॥
कनकनिकषरुचिशुचिवसनेन ।
श्वसिति न सा परिजनहसनेन ॥ सखि ! या० ॥६॥
सकलभुवनजनवरतरुणेन ।
वहति न सा रुजमतिकरुणेन ॥ सखि ! या० ॥७॥
श्रीजयदेवभणितवचनेन ।
प्रविशतु हरिरपि हृदयमनेन ॥ सखि ! या० ॥८॥

मनोभवानन्दन चन्दनानिल !
प्रसीद रे दक्षिण ! मुञ्च वामताम् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्त्वणं जगत्प्राण ! विधाय माधवं
पुरो मम प्राणहरो भविष्यसि ॥१॥
रिपुरिव सखीसंवासोऽयं शिखीव हिमानिलो
विषमिव सुधारश्मिर्यस्मिन्दुनोति मनोगते ।
हृदयमदये तस्मिन्नैवं पुनर्वलते बला-
त्कुवलयदृशां वामः कामो निकामनिरङ्कुशः ॥२॥
बाधां विधेहि मलयानिल ! पञ्चबाण !
प्राणान्गृहाण न गृहं पुनराश्रयिष्ये ।
किं ते कृतान्तभगिनि ! क्षमया तरङ्गै-
रङ्गानि सिञ्च मम शाम्यतु देहदाहः ॥३॥
प्रातर्नीलनिचोलमच्युतमुरः संवीतपीतांशुकं
राधायाश्चकितं विलोक्य हसति स्वैरं सखीमण्डले ।
व्रीडाचञ्चलमञ्चलं नयनयोराधाय राधानने
स्वादुस्मेरमुखोऽयमस्तु जगदानन्दाय नन्दात्मजः ॥४॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अष्टमः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विलक्ष्यलक्ष्मीपतिः

अथ कथमपि यामिनीं विनीय स्मरशरजर्जरितापि सा प्रभाते ।
अनुनयवचनं वदन्तमग्रे प्रणतमपि प्रियमाह साभ्यसूयम् ॥१॥

भैरवीरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१७॥

रजनिजनितगुरुजागररागकषायितमलसनिवेशम् ।
वहति नयनमनुरागमिव स्फुटमुदितरसाभिनिवेशम् ।
हरि हरि याहि माधव ! याहि केशव ! मा वद कैतववादम् ।
तामनुसर सरसीरुहलोचन ! या तव हरति विषादम् ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥

कज्जलमलिनविलोचनचुम्बनविरचितनीलिम रूपम् ।
दशनवसनमरुणं तव कृष्ण ! तनोति तनोरनुरूपम् ॥ हरि हरि० ॥२॥

वपुरनुहरति तव स्मरसङ्गरखरनखरक्षतरेखम् ।
मरकतशकलकलितकलधौतलिपेरिव रतिजयलेखम् ॥ हरि हरि० ॥३॥

चरणकमलगलदलक्तकसिक्तमिदं तव हृदयमुदारम् ।
दर्शयतीव वहिर्मदनद्रुमनवकिसलयपरिवारम् ॥ हरि हरि० ॥४॥

दशनपदं भवदधरगतं मम जनयति चेतसि खेदम् ।
कथयति कथमधुनापि मया सह तव वपुरेतदभेदम् ॥ हरि हरि० ॥५॥

वहिरिव मलिनतरं तव कृष्ण ! मनोऽपि भविष्यति नूनम् ।
कथमथ वञ्चयसे जनमनुगतमसमशरज्वरदूनम् ? ॥ हरि हरि० ॥६॥

भ्रमति भवानबलाकवलाय वनेषु किमत्र विचित्रम् ।
प्रथयति पूतनिकैव वधूवधनिर्दयवालचरित्रम् ॥ हरि हरि० ॥७॥

श्रीजयदेवभणितरतिवञ्चितखण्डितयुवतिविलापम् ।
शृणुत सुधामधुरं विबुधा ! विवुधालयतोऽपि दुरापम् ॥ हरि हरि० ॥८॥

तवेदं पश्यन्त्याः प्रसरदनुरागं वहिरिव
प्रियापादालक्तच्छुरितमरुणद्योति हृदयम् ।
ममाद्य प्रख्यातप्रणयभरभङ्गेन कितव !
त्वदालोकः शोकादपि किमपि लज्जां जनयति ॥१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तर्मोहनमौलिघूर्णनचलन्मन्दारविभ्रंशन-
स्तम्भाकर्षणदृष्टिहर्षणमहामन्त्रः कुरङ्गीदृशाम् ।
दृप्यद्दानवदूयमानदिविषद्दुर्वारदुःखापदां
भ्रंशः कंसरिपोर्विपोलयतु वः श्रेयांसि वंशीरवः ॥२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नवमः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तामथ मन्मथखिन्नां रतिरसभिन्नां विषादसंपन्नाम् ।
अनुचिन्तितहरिचरितां कलहान्तरितामुवाच रहसि सखी ॥१॥

गुर्जरीरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१८॥

हरिरभिसरति वहति मधुपवने
किमपरमधिकसुखं सखि ! भवने ॥
माधवे मा कुरु मानिनि ! मानमये ॥ ध्रुवपदम् ॥१॥
तालफलादपि गुरुमतिसरसम् ।
किं विफलीकुरुषे कुचकलशम् ? ॥ माधवे० ॥२॥
कति न कथितमिदमनुपदमचिरम् ।
मा परिहर हरिमतिशयरुचिरम् ॥ माधवे० ॥३॥
किमित विषीदसि रोदिषि विकला ?
विहसति युवतिसभा तव सकला ॥ माधवे० ॥४॥
सजलनलिनीदलशीतलशयने ।
हरिमवलोकय सफलय नयने ॥ माधवे० ॥५॥
जनयसि मनसि किमिति गुरुखेदम् ?
शृणु मम वचनमनीहितभेदम् ॥ माधवे० ॥६॥
हरिरुपयातु वदतु बहुमधुरम् ।
किमिति करोषि हृदयमतिविधुरम् ? ॥ माधवे० ॥७॥
श्रीजयदेवभणितमतिललितम् ।
सुखयतु रसिकजनं हरिचरितम् ॥ माधवे० ॥८॥

स्निग्धे यत्परुषासि यत्प्रणमति स्तब्धासि यद्रागिणि
द्वेषस्थासि यदुन्मुखे विमुखतां यातासि तस्मिन्प्रिये ।
तद्युक्तं विपरीतकारिणि तव श्रीखण्डचर्चा विषं
शीतांशुस्तपनो हिमं हुतवहः क्रीडामुदो यातनाः ॥१॥

सान्द्रानन्दपुरंदरादिदिविषद्वृन्दैरमन्दादरा-
दानम्रैर्मुकुटेन्द्रनीलमणिभिः संदर्शितेन्दिन्दिरम् ।
स्वच्छन्दं मकरन्दसुन्दरगलन्मन्दाकिनीमेदुरं
श्रीगोविन्दपदारविन्दमशुभस्कन्दाय वन्दामहे ॥२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दशमः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चतुरचतुर्भुजः

अत्रान्तरे मसृणरोषवशामपार-
निःश्वासनिःसहमुखीं सुमुखीमुपेत्य ।
सव्रीडमीक्षितसखीवदनां दिनान्ते
सानन्दगद्गदपदं हरिरित्युवाच ॥१॥

देशवराडीरागाष्टतालीतालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥१२॥

वदसि यदि किंचिदपि दन्तरुचिकौमुदी
हरति दरतिमिरमतिघोरम् ।
स्फुरदधरशीधवे तव वदनचन्द्रमा
रोचयतु लोचनचकोरम् ॥१॥
प्रिये ! चारुशीले ! मुञ्च मयि मानमनिदानम् ।
सपदि मदनानलो दहति मम मानसं
देहि मुखकमलमधुपानम् ॥ ध्रुवपदम् ॥
सत्यमेवासि यदि सुदति ! मयि कोपिनी
देहि खरनखरशरघातम् ।
घटय भुजबन्धनं जनय रदखण्डनं
येन वा भवति सुखजातम् । प्रिये !० ॥२॥
त्वमसि मम भूषणं त्वमसि मम जीवनं
त्वमसि मम भवजलधिरत्नम् ।
भवतु भवतीह मयि सततमनुरोधिनी
तत्र मम हृदयमतियत्नम् ॥ प्रिये !० ॥३॥
नीलनलिनाभमपि तन्वि ! तव लोचनं
धारयति कोकनदरूपम् ।
कुसुमशरबाणभावेन यदि रञ्जयसि
कृष्णमिदमेतदनुरूपम् ॥ प्रिये !० ॥४॥
स्फुरतु कुचकुम्भयोरुपरि मणिमञ्जरी
रञ्जयतु तव हृदयदेशम् ।
रसतु रसनापि तव घनजघनमण्डले
घोषयतु मन्मथनिदेशम् ॥ प्रिये !० ॥५॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थलकमलगञ्जनं मम हृदयरञ्जनं
जनितरतिरङ्गपरभागम् ।
भण मसृणवाणि ! करवाणि चरणद्वयं
सरसलसदलक्तकरागम् ।। प्रिये !० ।।६।।
स्मरगरलखण्डनं मम शिरसि मण्डनं
धेहि पदपल्लवमुदारम् ।
ज्वलति मयि दारुणो मदनकदनारुणो
हरतु तदुपाहितविकारम् ।। प्रिये !० ।।७।।
इति चटुलचाटुपटुचारु मुरवैरिणो
राधिकामधि वचनजातम् ।
जयति जयदेवकविभारतीभूषितं
मानिनीजनजनितशातम् ।। प्रिये !० ।।८।।
परिहर कृतातङ्के ! शङ्कां त्वया सततं घन-
स्तनजघनयाक्रान्ते स्वान्ते परानवकाशिनि ।
विशति वितनोरन्यो धन्यो न कोऽपि ममान्तरं
प्रणयिनि ! परीरम्भारम्भे विधेहि विधेयताम् ।।१।।
मुग्धे ! विधेहि मयि निर्दयदन्तदंश-
दोर्वल्लिबन्धनिबिडस्तनपीडनानि ।
चण्डि ! त्वमेव मुदमुद्वह पञ्चबाण-
चाण्डालकाण्डदलनादसवः प्रयान्ति ।।२।।
शशिमुख ! तव भाति भङ्गुरभ्रूर्युवजनमोहकरालकालसर्पी ।
तदुदितभयभञ्जनाय यूनां त्वदधरसीधुसुधैव सिद्धमन्त्रः ।।३।।
व्यथयति वृथा मौनं तन्वि ! प्रपञ्चय पञ्चमं
तरुणि ! मधुरालापैस्तापं विनोदय दृष्टिभिः ।
सुमुखि ! विमुखीभावं तावद्विमुञ्च न मुञ्च मां
स्वयमतिशयस्निग्धो मुग्धे ! प्रियोऽयमुपस्थितः ।।४।।
बन्धूकद्युतिबान्धवोऽयमधरः स्निग्धो मधूकच्छवि-
र्गण्डश्चण्डि ! चकास्ति नीलनलिनश्रीमोचनं लोचनम् ।
नासाभ्येति तिलप्रसूनपदवीं कुन्दाभदन्ति ! प्रिये !
प्रायस्त्वन्मुखसेवया विजयते विश्वं स पुष्पायुधः ।।५।।
दृशौ तव मदालसे वदनमिन्दुसंदीपनं
गतिर्जनमनोरमा विजितरम्भमूरुद्वयम् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रतिस्तव कलावती रुचिरचित्रलेखेभ्रुवा-
वहो विबुधयौवतं वहसि तन्वि! पृथ्वीगता ॥६॥
स प्रीतिं तनुतां हरिः कुवलयापीडेन सार्धं रणे
राधापीनपयोधरस्मरणकृत्कुम्भेन संभेदवान्।
अत्र स्विद्यति मीलति क्षणमपि क्षिप्रं तदालोकन-
व्यामोहेन जितं जितं जितमभूत्कंसस्य कोलाहलः ॥७॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एकादशः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुचिरमनुनयेन प्रीणयित्वा मृगाक्षीं
गतवति कृतवेशे केशवे कुञ्जशय्याम् ।
रचितरुचिरभूषां दृष्टिमोषे प्रदोषे
स्फुरति निरवसादां कापि राधां जगाद ॥१॥

वसन्तरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥२०॥

विरचितचाटुवचनरचनं चरणे रचितप्रणिपातम् ।
संप्रति मञ्जुलवञ्जुलसीमनि केलिशयनमनुयातम् ॥१॥
मुग्धे ! मधुमथनमनुगतमनुसर राधिके ! ॥ ध्रुवपदम् ॥
घनजघनस्तनभारभरे ! दरमन्थरचरणविहारम् ।
मुखरितमणिमञ्जीरमुपैहि विधेहि मरालनिकारम् ॥ मुग्धे० ॥२॥
शृणु रमणीयतरं तरुणीजनमोहनमधुपविरावम् ।
कुसुमशरासनशासनवन्दिनि पिकनिकरे भज भावम् ॥ मुग्धे० ॥३॥
अनिलतरलकिसलयनिकरेण करेण लतानिकुरम्बम् ।
प्रेरणमिव करभोरु ! करोति गतिं प्रति मुञ्च विलम्बम् ॥ मुग्धे० ॥४॥
स्फुरितमनङ्गतरङ्गवशादिव सूचितहरिपरिरम्भम् ।
पृच्छ मनोहरहारविमलजलधारममुं कुचकुम्भम् ॥ मुग्धे० ! ॥५॥
अधिगतमखिलसखीभिरिदं तव वपुरपि रतिरणसज्जम् ।
चण्डि ! रसितरशनारवडिण्डिममभिसर सरसमलज्जम् ॥ मुग्धे० ॥६॥
स्मरशरसुभगनखेन सखीमवलम्ब्य करेण सलीलम् ।
चल वलयक्वणितैरवबोधय हरिमपि निगदितशीलम् ॥ मुग्धे० ॥७॥
श्रीजयदेवभणितमधरीकृतहारमुदासितवामम् ।
हरिविनिहितमनसामधितिष्ठतु कण्ठतटीमविरामम् ॥ मुग्धे० ॥८॥

सा मां द्रक्ष्यति वक्ष्यति स्मरकथां प्रत्यङ्गमालिङ्गनैः
प्रीतिं यास्यति रंस्यते सखि ! समागत्येति चिन्ताकुलः ।
स त्वां पश्यति वेपते पुलकयत्यानन्दति स्विद्यति
प्रत्युद्गच्छति मूर्च्छति स्थिरतमःपुञ्जे निकुञ्जे प्रियः ॥१॥

अक्ष्णोर्निक्षिपदञ्जनं श्रवणयोस्तापिच्छगुच्छावलीं
मूर्ध्नि श्यामसरोजदाम कुचयोः कस्तूरिकापत्रकम् ॥२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धूर्तानामभिसारसंभ्रमजुषां विष्वङ्किकुञ्जे सखि !
ध्वान्तं नीलनिचोलचारु सुदृशां प्रत्यङ्गमालिङ्गति ॥३॥
काश्मीरगौरवपुषामभिसारिकाणा-
माबद्धरेखमभितो रुचिमञ्जरीभिः ।
एतत्तमालदलनीलतमं तमिस्रं
तत्प्रेमहेमनिकषोपलतां तनोति ॥४॥
हारावलीतरलकाञ्चनकाञ्चिदाम-
केयूरकङ्कणमणिद्युतिदीपितस्य ।
द्वारे निकुञ्जनिलयस्य हरिं निरीक्ष्य
व्रीडावतीमथ सखीमियमित्युवाच ॥५॥

वराडीरागरूपकतालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥२१॥

मञ्जुतरकुञ्जतलकेलिसदने
विलस रतिरभसहसितवदने ! ॥१॥
प्रविश राधे ! माधवसमीपमिह ॥ ध्रुवपदम् ॥
नवभवदशोकदलशयनसारे
विलस कुचकलशतरलहारे ! ॥ प्रविश० ॥२॥
कुसुमचयरचितशुचिवासगेहे ।
विलस कुसुमसुकुमारदेहे ॥ प्रविश० ॥३॥
मृदुचलमलयपवनसुरभिशीते ।
विलस मदनशरनिकरभीते ॥ प्रविश० ॥४॥
विततबहुवल्लिनवपल्लवघने
विलस चिरमलसपीनजघने ! । प्रविश० ॥५॥
मधुमुदितमधुपकुलकलितरावे ।
विलस कुसुमशरसरसभावे ॥ प्रविश० ॥६॥
मधुरतरपिकनिकरनिनदमुखरे ।
विलस दशनरुचिरुचिरशिखरे ! ॥ प्रविश० ॥७॥
विहितपद्मावतीसुखसमाजे ।
कुरु मुरारे ! मङ्गलशतानि ।
भणति जयदेवकविराजराजे ॥ प्रविश० ॥८॥
त्वां चित्तेन चिरं वहन्नयमतिश्रान्तो भृशं तापितः
कन्दर्पेण च पातुमिच्छति सुधासंबाधबिम्बाधरम् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अस्याङ्कं तदलंकुरु क्षणमिह भ्रूक्षेपलक्ष्मीलव-
क्रीते दास इवोपसेवितपदाम्भोजे कुतः संभ्रमः ? ॥१॥
सा ससाध्वससानन्दं गोविन्दे लोललोचना ।
सिञ्जानमञ्जुमञ्जीरं प्रविवेशाभिवेशनम् ॥२॥

वराडीरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥२२॥

राधावदनविलोकनविकसितविविधविकारविभङ्गम् ।
जलनिधिमिव विधुमण्डलदर्शनतरलिततुङ्गतरङ्गम् ॥१॥
हरिमेकरसं चिरमभिलषितविलासम् ।
सा ददर्श गुरुहर्षवशंवदवदनमनङ्गनिवासम् ॥ ध्रुवपदम् ॥
हारममलतरतारमुरसि दधतं परिरभ्य विदूरम् ।
स्फुटतरफेनकदम्बकरम्बितमिव यमुनाजलपूरम् ॥ हरि० ॥२॥
श्यामलमृदुलकलेवरमण्डलमधिगतगौरदुकूलम् ।
नीलनलिनमिव पीतपरागपटलभरवलयितमूलम् ॥ हरि० ॥३॥
तरलदृगञ्चलचलनमनोहरवदनजनितरतिरागम् ।
स्फुटकमलोदरखेलितखञ्जनयुगमिव शरदि तडागम् ॥ हरि० ॥४॥
वदनकमलपरिशीलनमिलितमिहिरसमकुण्डलशोभम् ।
स्मितरुचिरुचिरसमुल्लसिताधरपल्लवकृतरतिलोभम् ॥ हरि० ॥५॥
शशिकिरणच्छुरितोदरजलधरसुन्दरसकुसुमकेशम् ।
तिमिरोदितविधुमण्डलनिर्मलमलयजतिलकनिवेशम् ॥ हरि० ॥६॥
विपुलपुलकभरदन्तुरितं रतिकेलिकलाभिरधीरम् ।
मणिगणकिरणसमूहसमुज्ज्वलभूषणसुभगशरीरम् ॥ हरि० ॥७॥
श्रीजयदेवभणितविभवद्विगुणीकृतभूषणभारम् ।
प्रणमत हृदि विनिधाय हरिं सुचिरं सुकृतोदयसारम् ॥ हरि० ॥८॥

अतिक्रम्यापाङ्गं श्रवणपथपर्यन्तगमन-
प्रयासेनेवाक्ष्णोस्तरलतरतारं गमितयोः ।
इदानीं राधायाः प्रियतमसमायातसमये
पपात स्वेदाम्बुप्रसर इव हर्षाश्रुनिकरः ॥१॥
भजन्त्यास्तल्पान्तं कृतकपटकण्डूतिपिहित-
स्मितं याते गेहाद्बहिरवहितालीपरिजने ।
प्रियास्यं पश्यन्त्याः स्मरपरवशाकूतसुभगं
सलज्जा लज्जापि व्यगमदिव दूरं मृगदृशः ॥२॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सानन्दं नन्दसूनुर्दिशतु मितपरं संमदं मन्दमन्दं
राधामाधाय बाह्वोर्विवरमनु दृढं पीडयन्प्रीतियोगात् ।
तुङ्गौ तस्या उरोजावतनु वरतनोर्निर्गतौ मा स्म भूतां
पृष्ठं निर्भिद्य तस्माद्बहिरिति वलितग्रीवमालोकयन्वः ॥३॥

जयश्री विन्यस्तैर्महित इव मन्दारकुसुमैः
स्वयं सिन्दूरेण द्विपरणमुदा मुद्रित इव ।
भुजापीडक्रीडाहतकुवलयापीडकरिणः
प्रकीर्णासृग्बिन्दुर्जयति भुजदण्डो मुरजितः ॥४॥

सौन्दर्यैकनिधेरनङ्गललनालावण्यलीलाजुषो
राधाया हृदि पल्वले मनसिजक्रीडैकरङ्गस्थले ।
रम्योरोजसरोजखेलनरसित्वादात्मनः ख्यापय-
न्ध्यातुर्मानसराजहंसनिभतां देयान्मुकुन्दो मुदम् ॥५॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वादशः सर्गः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

—सु प्री त पी ता म्ब रः—

गतवति सखीवृन्देऽमन्दत्रपाभरनिर्भर-
स्मरपरवशाकूतस्फीतस्मितस्नपिताधराम् ।
सरसमनसं दृष्ट्वा राधां मुहुर्नवपल्लव-
प्रसवशयने निक्षिप्ताक्षीमुवाच हरिः प्रियाम् ॥१॥

विभासरागैकतालीतालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥२३॥

किसलयशयनतले कुरु कामिनि ! चरणनलिनविनिवेशम् ॥
तव पदपल्लववैरिपराभवमिदमनुभवतु सुवेशम् ॥१॥
क्षणमधुना नारायणमनुगतमनुसर राधिके ! ॥ ध्रुवपदम् ॥
करकमलेन करोमि चरणमहमागमितासि विदूरम् ।
क्षणमुपकुरु शयनोपरि मामिव नूपुरमनुगतिशूरम् ॥ क्षण० ॥२॥
वदनसुधानिधिगलितममृतमिव रचय वचनमनुकूलम् ।
विरहमिवापनयामि पयोधररोधकमुरसि दुकूलम् ॥ क्षण० ॥३॥
प्रियपरिरम्भणरभसवलितमिव पुलकितमतिदुरवापम् ।
मदुरसि कुचकलशं विनिवेशय शोषय मनसिजतापम् ॥ क्षण० ॥४॥
अधरसुधारसमुपनय भामिनि ! जीवय मृतमिव दासम् ।
त्वयि विनिहितमनसं विरहानलदग्धवपुषमविलासम् ॥ क्षण० ॥५॥
शशिमुखि ! मुखरय मणिरशनागुणमनुगुणकण्ठनिनादम् ।
श्रुतियुगले पिकरुतविकले मम शमय चिरादवसादम् ॥ क्षण० ॥६॥
मामतिविफलरुषा विकलीकृतमवलोकितुमधुनेदम् ।
लज्जितमिव नयनं तव विरमति सृजसि वृथा रतिखेदम् ॥ क्षण० ॥७॥
श्रीजयदेवभणितमिदमनुपदनिगदितमधुरिपुमोदम् ।
जनयतु रसिकजनेषु मनोरमरतिरसभावविनोदम् ॥ क्षण० ॥८॥

प्रत्यूहः पुलकाङ्कुरेण निबिडाश्लेषे निमेषेण च
क्रीडाकूतविलोकितेऽधरसुधापाने कथाकेलिभिः ।
आनन्दाधिगमेन मन्मथकलायुद्धेऽपि यस्मिन्नभू-
दुद्भूतः स तयोर्बभूव सुरतारम्भः प्रियंभावुकः ॥१॥
दोर्भ्यां संयमितः पयोधरभरेणापीडितः पाणिजै-
राविद्धो दशनैः क्षताधरपुटः श्रोणीतटेनाहतः ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हस्तेनानमितः कचेऽधरमधुस्यन्देन संमोहितः
कान्तः कामपि तृप्तिमाप तदहो कामस्य वामा गतिः ॥२॥
वामाङ्के रतिकेलिसंकुलरणारम्भे तया साहस-
प्रायं कान्तजयाय किंचिदुपरि प्रारम्भि यत्संभ्रमात ।
निष्पन्दा जघनस्थली शिथिलिता दोर्वल्लिरुत्कम्पितं
वक्षो मीलितमक्षि पौरुषरसः स्त्रीणां कुतः सिध्यति ॥३॥
तस्याः पाटलपाणिजाङ्कितमुरो निद्राकषाये दृशौ
निर्धौताधरशोणिमा विलुलितस्रस्तस्रजो मूर्धजाः ।
काञ्चीदाम दरश्लथाञ्चलमिति प्रातर्निखातैर्दृशो-
रेभिः कामशरैस्तदद्भुतमभूत्पत्युर्मनः कीलितम् ॥४॥
व्याकोशः केशपाशस्तरलितमलकैः स्वेदमोषौ कपोलौ
क्लिष्टा बिम्बाधर श्रीः कुचकलशरुचा हारिता हारयष्टिः ।
काञ्चीकान्तिर्हताशा स्तनजघनपदं पाणिनाच्छाद्य सद्यः
पश्यन्ती सत्रपा सा तदपि विलुलिता मुग्धकान्तिर्धिनोति ॥५॥
ईषन्मीलितदृष्टि मुग्धविलसत्सीत्कारधारावशा-
दव्यक्ताकुलकेलिकाकुविकसद्दन्तांशुधौताधरम् ।
शान्तस्तब्धपयोधरं भृशपरिष्वङ्गात्कुरङ्गीदृशो
हर्षोत्कर्षविमुक्तनिःसहतनोर्धन्यो धयत्याननम् ॥६॥
अथ सहसा सुप्रीतं सुरतान्ते सा नितान्तखिन्नाङ्गी ।
राधा जगाद सादरमिदमानन्देन गोविन्दम् ॥७॥

रामकरीरागयतितालाभ्यां गीयते ॥ प्रबन्धः ॥२४॥

कुरु यदुनन्दन ! चन्दनशिशिरतरेण करेण पयोधरे ।
मृगमदपत्रकमत्र मनोभवमङ्गलकलशसहोदरे ॥१॥
निजगाद सा यदुनन्दने क्रीडति हृदयानन्दने ॥ ध्रुवपदम् ॥
अलिकुलगञ्जनमञ्जनकं रतिनायकसायकमोचने ।
त्वदधरचुम्बनलम्बितकज्जल उज्ज्वलय प्रिय ! लोचने ॥ निज० ॥२॥
नयनकुरङ्गतरङ्गविकासनिरासकरे श्रुतिमण्डले ।
मनसिजपाशविलासधरे शुभवेश ! निवेशय कुण्डले ॥ निज० ॥३॥
भ्रमरचयं रचयन्तमुपरि रुचिरंसुचिरं मम संमुखे ।
जितकमले विमले परिकर्मय नर्मजनकमलकं मुखे ॥ निज० ॥४॥
मृगमदरसवलितं ललितं कुरु तिलकमलिकरजनीकरे ।
विहितकलङ्ककलं कमलानन ! विश्रमितश्रमशीकरे ॥ निज० ॥५॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मम रुचिरे चिकुरे कुरु मानद ! मनसिजध्वजचामरे ।
रतिगलिते ललिते कुसुमानि शिखण्डिशिखण्डकडामरे ॥ निज ॥६॥
सरसघने जघने मम शम्बरदारणवारणकन्दरे ।
मणिरशनावसनाभरणानि शुभाशय ! वासय सुन्दरे । निज० ॥७॥
श्रीजयदेववचसि रुचिरे सदयं हृदयं कुरु मण्डने ।
हरिचरणस्मरणामृतनिर्मितकलिकलुषज्वरखण्डने ॥ निज० ॥८॥

रचय कुचयोश्चित्रं पत्रं कुरुष्व कपोलयो-
घटय जघने काञ्चीं मुग्धस्रजा कबरीभरम् ।
कलय वलयश्रेणीं पाणौ पदे मणिनूपुरा-
विति निगदितः प्रीतः पीताम्बरोऽपि तथाकरोत् ॥९॥

यद्गान्धर्वकलासु कौशलमनुध्यानं च यद्वैष्णवं
यच्छृङ्गारविवेकतत्त्वरचनाकाव्येषु लीलायितम् ।
तत्सर्वं जयदेवपण्डितकवेः कृष्णैकतानात्मनः
सानन्दाः परिशोधयन्तु सुधियः श्रीगीतगोविन्दतः ॥१०॥

श्रीभोजदेवप्रभवस्य रामादेवीसुतश्रीजयदेवकस्य ।
पराशरादिप्रियवर्गकण्ठे श्रीगीतगोविन्दकवित्वमस्तु ॥११॥

साध्वी माध्वीक ! चिन्ता न भवति भवतः शर्करे ! कर्कशासि
द्राक्षे ! द्रक्ष्यन्ति के त्वाममृत ! मृतमसि क्षीर नीरं रसस्ते ।
माकन्द ! क्रन्द कान्ताधर ! धर न तुलां गच्छ यच्छन्ति भावं ।
यावच्छृङ्गारसारं शुभमिव जयदेवस्य वैदग्ध्यवाचः ॥१२॥

इत्थं केलितती र्विहृत्य यमुनाकूले समं राधया
तद्रोमावलिमौक्तिकावलियुगे वेणीभ्रमं बिभ्रति ।
तत्राह्लादिकुचप्रयागफलयोर्लिप्सावतोर्हस्तयो-
र्व्यापाराः पुरुषोत्तमस्य ददतु स्फीतां मुदां संपदम् ॥१३॥

॥ समाप्तं चेदं काव्यम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्ट
स्वर-लिपियाँ

स्वर-लिपिकार
श्री सूर्यकान्त वर्मा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ललित लवंग लता (राग : वसन्त)

	×				×				×				×			
	धनी़				नी											
	सां	सां	सां	सां	सां	–	सां	सां	नी	ध̱	नी	रें̱	नी	–	ध̱	प
	ल	लि	त	ल	वं	ऽ	ग	ल	ता	ऽ	प	रि	चुं	ऽ	वि	त
	(प)	–	मं	ग	मं	ध̱	सां	नी	रें̱	–	–	सां				
	को	ऽ	म	ल	म	ल	य	स	मी	ऽ	ऽ	र				
	नी	रें̱	नी	ध̱	नी	ध̱	प	प	प	प	मंप	ध̱प	मं	ग	मं	ग
	म	धु	क	र	नि	क	र	क	लि	त,	को	ऽ	कि	ल	से	ऽ
	मंप	ध̱		ग	मं	ग	रे̱	सा	नी़	सा	–	सा				
	कू	ऽ	जि	त	कुं	ऽ	ज,	कु	टी	ऽ	ऽ	र				
	×				×				×				×			
सा	सा	रे̱	नी़	नी़	सा	–	म	म	म	–	म	मं	ग	–	ग	
ल	ह	र	उ	ठ	ता	ऽ	र	म	णी	ऽ	का	ऽ	ची	ऽ	र	
मं	ग	रे̱	सा	–	सा	–	म	म	म	म	मं	म	ग	–	ग	
ना	ऽ	च	ते	ऽ	हैं	ऽ	ह	रि	स	र	स,	अ	धी	ऽ	र	

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

है विरह की पीर भारी (राग : तोड़ी——ताल : तेवरा)

रे	ग	रे	सा	सा	ऩी	ध़	सा	–	रे	ग	–	रे	ग
है	ऽ	वि	र	ह	की	ऽ	पी	ऽ	र	भा	ऽ	री	ऽ
मं	ध	मं	ग	–	रे	–	ग	–	रे	सा	–	सा	–
छी	ऽ	ज	ती	ऽ	जा	ऽ	ती	ऽ	त्रि	चा	ऽ	री	ऽ
रे	–	ग	म	–	मं	–	प	–	प	ध	प	प	–
हा	ऽ	र	उ	र	का	ऽ	भा	ऽ	र	ब	न	ता	ऽ
ग	ग	ग	म	मं	ध	–	ध	नी	ध	मं	ध	प	–
म	ल	य	वि	ष	की	ऽ	धा	ऽ	र	ब	न	ता	ऽ
मं	–	ध	नी	–	नी	ध	(नी)सां	–	सां	सां	रें	सां	–
श्वा	ऽ	स	का	ऽ	आ	ऽ	धा	ऽ	र	ब	न	ता	ऽ
रें	गं	रें	(नी)सां	–	नी	ध	(मं)प	–	मं	ग	मं	ग	–
द	ह	न	का	ऽ	उ	प	चा	ऽ	र	ब	न	ता	ऽ
रे	ग	रे	सा	सा	ऩी	ध़	सा	–	रे				
है	ऽ	वि	र	ह	की	ऽ	पी	ऽ	र				

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

तव विरहे वनमाली (राग: शिवरंजनी—ताल: कहरवा)

रे	ग॒	प	–	प	–	प	–	ध	प	–	ग॒	–	ग॒	रे	रे
मैं	ऽ	वै	ऽ	ठा	ऽ	हूँ	ऽ	य	हीं	ऽ	औ	ऽ	र	स	खि
रे	ग॒	प	–	प	ध	सां	ध	ध	सां	सां	–	–	–	–	–
रा	ऽ	धा	ऽ	से	ऽ	जा	ऽ	क	ह	ना	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
ध	सां	रें	सां	ध	ध	प	प	ग॒	प	ध	प	ग॒	–	रे	रे
क	ब	त	क	नि	ठु	र	औ	ऽ	र	उ	त	पी	ऽ	ड़	न
रे	ग॒	प	–	ग॒	–	रे	ग॒	रे	रे	सा	–	–	–	–	–
मु	झ	को	ऽ	है	ऽ	य	ह	स	ह	ना	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
×								×							
(ध़)प़	ध़	सा	सा	सा	रे	(रे)ग॒	ग॒	रेसा	रे	सा	–	रे	सा	ध़	प़
त	व	वि	र	हे	ऽ	व	न	मा	ऽ	ली	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
रे	ग॒	प	प	प	ध	सां	ध	प	ध	प	ग॒	रे	ग॒	रे	सा
प	ल	प	ल	व्या	ऽ	कु	ल	आ	ऽ	ली	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
प़	ध़	सा	रे	सारे	ग॒	ग॒	–	रे	ग॒	रे	सा	ग॒	ध़	रे	–
वि	व	श	ब	ना	ऽ	तीं	ऽ	का	ऽ	म,	ल	ह	रि	यां	ऽ
रे	ग॒	प	प	ग॒	प	ध	सां	ध	सां	सां	–	–	–	–	–
मि	ल	क	र	म	ल	य	स	मी	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
ध	सां	रें	सां	ध	–	प	प	ग॒	प	ध	प	ग॒	–	रे	रे
च	ल	द	ल	सा	ऽ	च	ल	जा	ऽ	तां	ऽ	जी	ऽ	ज	ब
रे	ग॒	प	ध	सां	ध	सां	रें	गं॒	रें	सां	ध	प	ग॒	रे	सा
हँ	स	ती	ऽ	क	लि	यां	ऽ	धी	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मानिनि ! मत अब मान करो (राग : चन्द्रकौंस—ताल : त्रिताल)

सा म म म	ग॒ म म म	ग॒ म ग॒ म	ग॒ म सा –
म न् म थ	खि ऽ न्ने ऽ	र ति र स	भि ऽ न्ने ऽ
ग॒ – म –	ध॒ – नी –	ध॒ नी नी –	– – – –
शो ऽ क वि	प ऽ न्ने ऽ	रा ऽ धे ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ
ध॒ सां (नी)सां –	सां सां नी सां	नी सां नी ध़	म म ग॒ ग॒
ह रि चि ऽ	न्त न र त	स लि ल न	य न ग त
म ध॒ म ग॒	ग॒ म ग॒ सा	ऩी सा सा –	(ग॒ म ग॒ सा)
वै ऽ ठी ऽ	हो ऽ चु प	सा ऽ धे –	(मा ऽ नि नि)
०	–	+	म
ग॒ ग॒ म म	ध॒ – नीसां नी	सां – – –	ग॒ म ग॒ सा
म त अ ब	मा ऽ न क	रो ऽ ऽ ऽ,	मा ऽ नि नि
सा ऩी सा म	ग॒ म म म,	म – ग॒ म	ग॒ ग॒ सा —
म ऽ न्द म	ऽ न्द म धु,	वा ऽ यु वि	ह र ती ऽ
ऩी सा म ग॒	म म म –	ग॒ ध॒ म ग॒	म ग॒ सा —
ला ऽ ई ऽ	उ स को ऽ,	य हां ऽ सि	ह र ती ऽ
ग॒ – म –	ध॒ – नी –	सां – धनी सांरें	सां नी ध॒ म
वै ऽ ठी ऽ	जि स का ऽ	ध्या ऽ न ध	रो ऽ ऽ ऽ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

प्रिये चारुशीले (राग : मिश्र—ताल : रूपक)

रे नी़	नी सा	–	नी़	ध़	नी़	सा	नी़	सा	–	सा	ग	–	म	ग	म	रै	म	ग॒रे	ग॒
प्रि	ये	ऽ	चा	ऽ	रु	शी	ऽ	ले	ऽ	त	जो	ऽ	मा	ऽ	न	प्या	ऽ	रा	ऽ,
सा	सा	सा	ग	–	ग	म	ग	म	–	म	रे	म	रेम	पध	प	म	प	ग॒रे	ग॒
अ	ध	र	प	ऽ	ल्ल	र	स	दे	ऽ	ह	रो	ऽ	ता	ऽ	प	सा	ऽ	रा	ऽ,
नी़	सा	सा	नी़	ध़	नी़	सा	नी़	सा	ऽ	ध़नी़	रे	–	रे	–	सा	सारे	ग॒	रे	ग॒
त	नि	क	बो	ऽ	ल	बो	ऽ	लो	ऽ	खि	ले	ऽ	द	ऽ	न्त	ज्यो	ऽ	त्स्ना	ऽ,
सा	ग	–	ग	–	ग	म	ग	म	म	म	रे	म	रेम	पध	प	म	प	ग॒	रे
मि	टे	ऽ	घो	ऽ	र	त	म	म	य,	क	रो	ऽ	आ	ऽ	ज	टो	ऽ	ना	ऽ,
रेग॒	प	–	प	प	ध	प	ध॒	प	ध	प	ग	म	म	–	प	ग	म	ग॒	रे
सु	धा	ऽ	स	म	अ	ध	र	त	व,	व	द	न	च	ऽ	न्द्र	मा	ऽ	से	ऽ,
म	ध	–	नी़	ध	नी़	प	ध॒	प	ध॒	प	ग	–	म	ध॒	प	ग	म	ग॒	रे
ल	गे	ऽ	लो	ऽ	ल	लो	ऽ	च	न,	च	कों	ऽ	र	क	ब	ने	ऽ	से	ऽ,

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चल सखि, चल (राग : जैजैवंती—ताल : त्रिताल)

सा	नी	सा	रे	सा	सा	ध	नी	रे	–	रे	ग	म	प	म	गरे
च	ल	स	खि	च	ल	ह	रि	कुं	ऽ	ज	स	द	न	में	ऽ
ग	–	ग	ग	रेग	मप	म	म	रे	ग	रे	सा	रे	नी	सा	–
मं	ऽ	जु	ल	वं	ऽ	जु	ल	क	लि	त	के	ऽ	लि	थ	ल
ग	–	ग	ग	रेग	मप	ग	म	रे	ग	रे	सा	रे	नी	सा	–
दे	ऽ	ख	थ	के	ऽ	ह	रि	तु	भ	को	ऽ	प	ल	प	ल
रे	–	म	प	नी	–	सां	ऽ	रें	गं	रें	सां	नी	नी	ध	प
कीं	ऽ	म	नु	हा	ऽ	रें	ऽ	गि	रे	ऽ	च	र	ण	त	ल
ध	ध	ध	–	पध	नी	ध	प	म	ग	रे	ग	म	प	म	गरे
भ	र	ला	ऽ	ये	ऽ	री	ऽ	नी	ऽ	र	न	य	न	में	ऽ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हमारे कुछ प्रमुख प्रकाशन

प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास डॉ० रांगेय राघव
प्रागैतिहासिक भारत का भौगोलिक तथा सामाजिक
परिस्थितियों का विस्तृत चित्रण
मूल्य १२)

भारत का सांस्कृतिक इतिहास (सचित्र) हरिदत्त वेदालंकार
वैदिक युग से लेकर आज तक का भारतीय
संस्कृति का क्रमबद्ध इतिहास
मूल्य ६)

भारत का चित्रमय इतिहास महावीर अधिकारी
प्रागैतिहासिक काल से लेकर तालीकोट युद्ध तक
का क्रमबद्ध सचित्र इतिहास
मूल्य ६)

रजवाड़ा (सचित्र) देवेश दास
राजस्थान की कलों, संस्कृति तथा ऐतिहासिक
गाथाओं का सजीव रोमांचकारी
सचित्र वर्णन
मूल्य ५)

भारतीय सांस्कृतिक दिग्विजय हरिदत्त वेदालंकार
भारतीय संस्कृति के विस्तार की रोचक कथा
मूल्य १)

पृथ्वी-परिक्रमा सेठ गोविन्ददास
विश्व के मुख्य देशों की यात्रा तथा
वहाँ का रोचक वर्णन
मूल्य १२)

नेपाल की कहानी काशीप्रसाद श्रीवास्तव
नेपाल का प्राकृतिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक
तथा राजनैतिक सचित्र वर्णन
मूल्य ८)

सचित्र गृह-विनोद अरुण, एम. ए.
घरेलू मनोविज्ञान सम्बन्धी एकमात्र
सचित्र उपयोगी पुस्तक
मूल्य ८)

आत्माराम एण्ड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi